ISSN 2455-0310

1.6

LISTED UNDER
UGC APPROVED LIST OF JOURNALS

DRJI

ISI Indexing | JIF Evaluation

JIFACTOR

A Bilingual, Bimonthly Multidisciplinary International e-Journal

TRANSFRAME

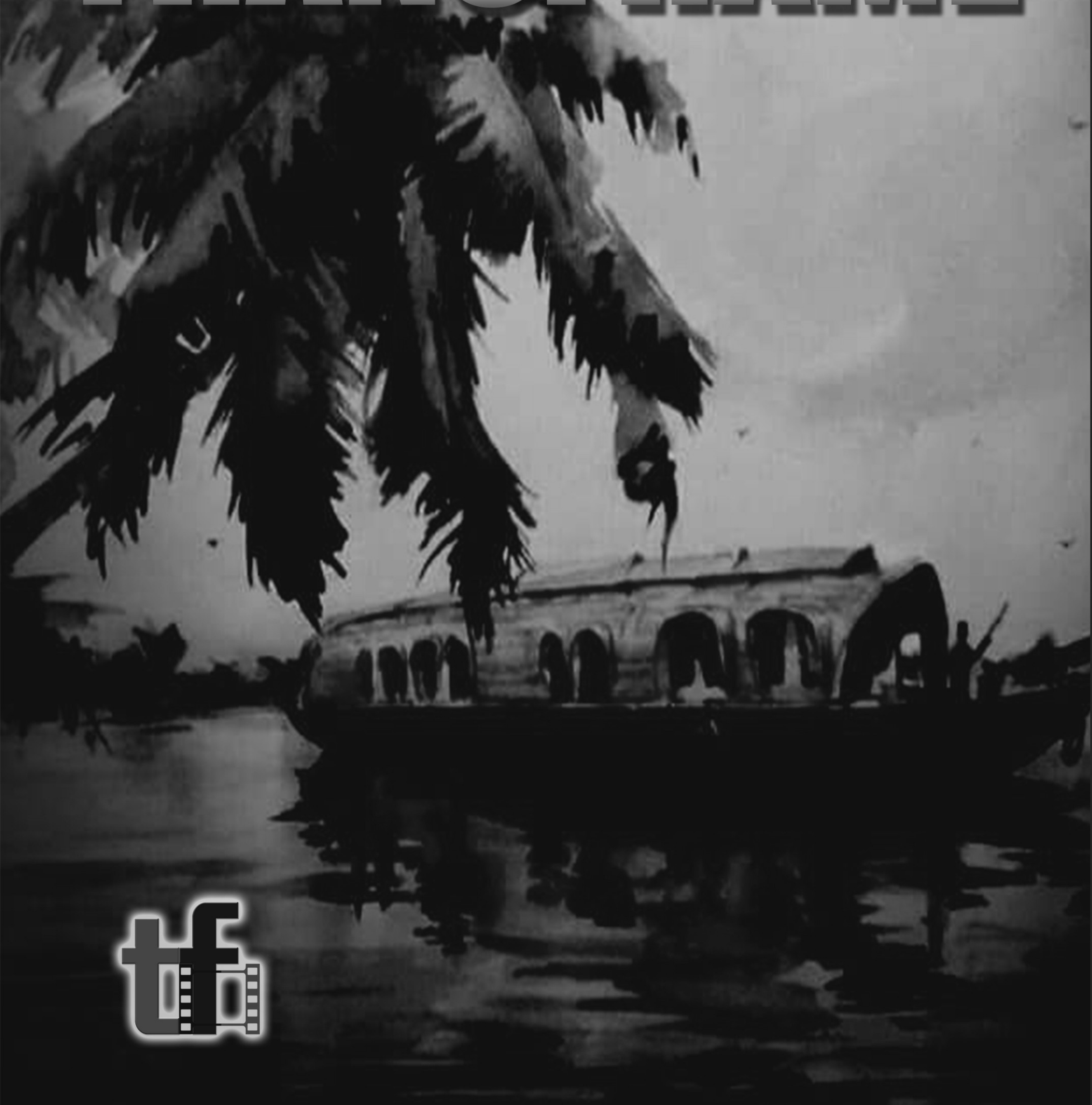

tf

VOLUME 1, ISSUE 6

JULY-AUGUST 2016

TRANSFRAME
E– JOURNAL

VOLUME 1, ISSUE 6

2016

CLICK ON ARTICLES TO READ

STUDY

4 बुद्धा इन दी ट्रैफिक जाम - सत्ता की पोल नहीं खोल पाया यह फ़िल्मी ढोल :अभिषेक त्रिपाठी

6 सैराट -सिनेमा के बहाने उभरे सवाल : नीलेश झाल्टे

9 हिंदी सिनेमा में आदिवासी प्रतिरोध की सशक्त दस्तक – चक्रव्यूह : निशांत मिश्र

12 पर्यटन में भाषा और अनुवाद की भूमिका : डॉ. हर्षा रामकृष्णकराव वडतकर

15 हिंदी साहित्य के विकास में अनुवाद की भूमिका: अनुराधा पाण्डेय

PERSONALITY

20 नागराज मंजुले : लेखक, अभिनेता, निर्देशक : ट्रांसफ्रेम

21 भीष्म साहनी: ट्रांसफ्रेम

CRITICAL EVALUATION

22 Review of English-Hindi Phrasal Dictionary: Mrs. Shalini Mishra

24 मिथ तोड़ती सैराट: रुद्रभानु प्रताप सिंह, रूपाली अलोने

RESEARCH

26 Disambiguating Verb Sense - A Rule-based Approach for Machine Translation : Sudhir Jinde

CREATION

29 तुलिका - विशाल सोरटे

30 कैमरा - नरेश गौतम

31 लेखनी - मेघा आचार्य

INTERVIEW

32 बात-चीत : डॉ. चंद्रप्रकाश द्विवेदी – मनीष कुमार जैसल

38 Interview : Dr. Ana Stjelja –Ms. Latika Chawda

TRANSLATION

41 ख़लील ज़िब्रान की कविता का हिंदी अनुवाद : मेघा आचार्य

LANGUAGE

42 हिंदी साहित्य में युग प्रवर्तक के रूप में प्रेमचंद : डॉ. अन्नपूर्णा सी.

44 असहिष्णुता के दौर में भीष्म साहनी की कहानियां : शिव दत्त

RESEARCH

47 भारतीय परंपरा में योग : डॉ. संजय कुमार तिवारी

50 जनपद भिण्ड (म0प्र0) में मृदा का क्षेत्रीय वितरण : भौगोलिक अध्ययन .डॉ0 पुष्पहास पाण्डेय शिवम् वर्मा

TRANSFRAME
Bilingual, Bimonthly E– Journal

EDITORIAL

हमें खुशी हैं कि हिंदी साहित्य की यथार्थवादी परंपरा की नींव रखने वाले मुंशी प्रेमचंद के जन्म माह और आधुनिक हिंदी साहित्य के प्रमुख स्तंभों में परिगणित भीष्म साहनी के जन्म शताब्दी वर्ष में ट्रांसफ्रेम प्रस्तुत अंक के साथ अपना एक वर्ष पूरा कर रहा है। ट्रांसफ्रेम के इस एक वर्ष की यात्रा में ट्रांसफ्रेम टीम के साथ-साथ आप सुधी लेखकों और पाठकों का सहयोग भी महत्वपूर्ण रहा है।

प्रस्तुत अंक प्रेमचंद तथा भीष्म साहनी की साहित्य सेवा, फ़िल्म जगत में अपने प्रतिभा का लोहा मनवाने वाले निर्देशक नागराज मंजुले का व्यक्तित्व परिचय, उनकी बहुचर्चित फ़िल्म ‘सैराट’ की समीक्षा के साथ-साथ फ़िल्म निर्देशक चंद्रप्रकाश द्विवेदी से बात-चीत, अनुवाद क्षेत्र के सुप्रसिद्ध विद्वान प्रो. कृष्णकुमार गोस्वामी द्वारा संपादित हिंदी-अंग्रेज़ी पदबंध कोश की समीक्षा, लेबनानी-अमेरिकी कलाकार ख़लील ज़िब्रान की कविता का हिंदी अनुवाद आदि रोचक सामग्री के साथ आपके समक्ष प्रस्तुत है।

संपादक

PUBLISHER

Praveen Singh Chauhan

Peace Aprt., Versova

Andheri (w) Mumbai 400061

T +91 9763706428

EDITOR

Megha Acharya

Praveen Singh Chauhan

LAYOUT & DESIGN

Praveen & Megha

COVER PAGE

Vishal Sortey

©All Rights Reserved

The publisher regret that they can not accept liability for error or ommisions contained in this publication, however caused. The opinions and views contained in this publication are not necessarily those of the publishers or editors. No part of this publication or any part of the contents there of may be reproduced or transmitted in any form without the permission of publishers in writing. An exemtion is hereby granted for extracts used for the purpose of fair review.

GO DIGITAL, GO PAPERLESS, SAVE TREES, SAVE WATER

Volume 1 Issue 6 www.transframe.in ISSN 2455-0310

“बुद्धा इन दी ट्रैफिक जाम”

एक ऐसा आईना जो सिर्फ नक्सलियों की हक़ीकत को ही साध सका...सत्ता की पोल नहीं खोल पाया यह फ़िल्मी ढोल....

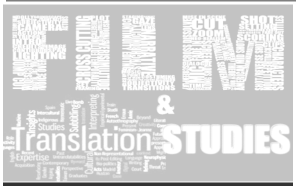

अध्ययन

अभी-अभी फ़िल्म **“बुद्धा इन द ट्रैफिक जाम**” देखी. फ़िल्म के ट्रेलर के रिलीज़ होने के बाद से ही इस फ़िल्म को लेकर मन में गहरी जिज्ञासा बनी हुई थी. काफी जद्दोजहद के बाद बमुश्किलन एक देखने लायक प्रिंट आज हाथ लगी (चूँकि फ़िल्म हमारे यहाँ के सिनेमाहाल तक नहीं पहुँची... इस नाते यह उद्यम करना पड़ा....).

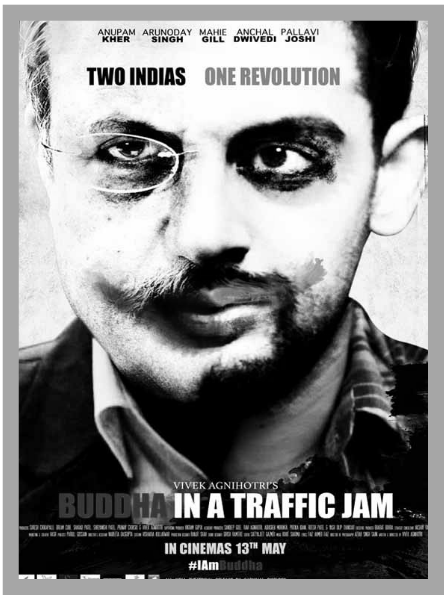

फ़िल्म विवादों में है... फ़िल्म के विषय और उसमें बहुत से मुद्दों के चित्रण को लेकर बहुतों ने गहरी आपत्ति दर्ज कराई है. बहुत से लोग इसे सरकारी दृष्टिकोण की प्रस्तुति मान रहे हैं.....! कुछ लोगों का दावा है कि इस फ़िल्म की टीम विचारधारा विशेष की समर्थक है; फलतः उसी का प्रभाव संपूर्ण फ़िल्म पर छाया हुआ है.

किसी भी रचनात्मक विधा की बात कर ली जाए, यह अकाट्य सत्य है कि वह अपने रचयिता के विचारों और सोच का ही बहुत हद तक प्रतिबिंब होती है और रचनाकार बहुत हद तक स्वयं को ही ऐसे माध्यमों के जरिये अभिव्यक्ति दे रहा होता है.

इस फ़िल्म पर सिर्फ फ़िल्मी दृष्टिकोण से कुछ लिखा नहीं जा सकता... यदि ऐसा रहता तो मैं अपने इस संक्षिप्त लेख में यह कहकर सीधे-सीधे निकल जाता कि यह एक अच्छी फ़िल्म है और कुछ अपवादों को छोड़कर अभिनय, निर्देशन आदि के दृष्टि से बेहतर (उम्दा) कही जा सकती है और लोगों को चाहिए कि इस फ़िल्म को देखें, परंतु इस फ़िल्म की कहानी जिस विषय के इर्द-गिर्द गढ़ी गई है वह विषय इतना सरल और सपाट नहीं है कि जिस पर फौरी तौर पर कोई भी पक्ष पकड़कर अपनी बात रख दी जाए और धारणा बना आगे बढ़ जाया जाए.

फ़िल्म जिस विषय (नक्सलवाद और इसके रूप आदि) को केंद्र में रखकर आगे बढ़ी है, उस विषय को समझने और उस पर बात कहने के लिए एक बुनियादी शर्त है कि जो भी व्यक्ति/संस्था इस विषय पर कुछ बोलना/कहना या कोई निष्कर्ष देना चाहता है वह बिल्कुल तटस्थ होकर ही गहराई में जाकर चीज़ों को देखे, समझे-बूझे और फिर किसी निष्कर्ष को प्रतिपादित करे और ऐसी तटस्थता निश्चित तौर पर ऐसे व्यक्ति/संस्था की ही मांग करेगी जो किसी विचारधारा विशेष का अनुयायी ना हो और अपनी आँख कान खुली रख देखने-सुनने में भरोसा रखता हो!

विवेक अग्निहोत्री

फ़िल्म के निर्देशक **विवेक अग्निहोत्री** और **अनुपम खेर** (फ़िल्म के प्रीमियर के दौरान उनकी बातचीत) को सुनने के बाद एक चीज़ तो स्पष्ट है कि फ़िल्म से जुड़े लोग बिलकुल तटस्थ तो नहीं ही हैं.....! ऐसी स्थिति में यह मानकर चलिए कि फ़िल्म में इनकी अपनी व्यक्तिगत विचारधारा तो हावी होगी ही.....; ऐसा यथार्थ में है भी (फ़िल्म को देखने के बाद मेरा मत) !

अभिषेक त्रिपाठी

संपर्क –9623278236

वैसे किसी भी रचनात्मक विधा की बात कर ली जाए, यह अकाट्य सत्य है कि वह अपने रचयिता के विचारों और सोच का ही बहुत हद तक प्रतिबिंब होती है और रचनाकार बहुत हद तक स्वयं को ही ऐसे माध्यमों के जरिये अभिव्यक्ति दे रहा होता है; वैसे यह निहायत ही सामान्य और स्वस्थ स्थिति है और इसे ग़लत बिलकुल नहीं ठहराया जा सकता . पर यहाँ एक समस्या यह है कि यदि कोई रचनात्मक मनुष्य किसी ऐसे विषय को लेकर फ़िल्म जैसे सशक्त माध्यमों के जरिये अपने विचार को अभिव्यक्त कर रहा है जो विषय कुछ ज़्यादा ही ज्वलंत/संवेदनशील हो और ठोस छानबीन की मांग करे, तो सिर्फ अपने निजी भावनात्मक विश्लेषण से कोई भी व्यक्तिनिष्ठ (सब्जेक्टिव) अभिव्यक्ति थोड़ी अनुचित/असंतुलित मानी जाती है . **फ़िल्म “बुद्धा इन द ट्रैफिक जाम” में विवेक अग्निहोत्री एंड टीम इसी अनुचित तो नहीं पर हाँ असंतुलित अभिव्यक्ति की शिकार ज़रूर हो गई है.**

नक्सल आंदोलन के जिस पक्ष को ज़मीनी हकीकत के रूप में इस फ़िल्म में दिखाया गया है, वह नक्सल आंदोलन के आदर्शवादी मुखौटे के पीछे छिपा एक कड़वा/वीभत्स सच है, इसमें कहीं दो मत नहीं......! नक्सल आंदोलन के सामने जो सवाल खड़े किए गए हैं वह निःसंदेह जायज हैं... और यह सच है कि इस आंदोलन से जुड़े लोगों के पास इसका जवाब नहीं है....! **अगर नक्सल आंदोलन से जुड़े लोग शासन व्यवस्था और उससे जुड़े लोगों की असफलता का उद्घोष कर अपने आंदोलन को संजीवनी दे रहे हैं और इस समूची व्यवस्था को नकार रहे हैं तो फिर इतने लंबे वर्षों की उनकी सक्रियता का परिणाम भी क्या है?** इतने लंबे वर्षों की उनकी सक्रियता से जिन लोगों का भला हुआ है उसका रोल मॉडल कहाँ है? **उनका अपना मॉडल क्यों अब तक सैम्पल रूप में ही सही कहीं भी, छोटे से रूप में भी खड़ा नहीं हो पाया है जिसे वह आदर्श रूप में इस व्यवस्था के सामने चुनौती रूप में पेश कर सकें...?**

इस फ़िल्म ने एक जायज काम तो किया है कि नक्सल आंदोलन को आईना दिखाया है परंतु यहाँ आईना सिर्फ नक्सलियों को दिखाया गया है, उन्हें नहीं जो हमारी शासन व्यवस्था (मुख्य धारा) के हिस्सा बन प्रकृति को उजाड़ने, जंगल को नष्ट करने और ज़मीन को बंजर बनाने पर लगे हुए हैं; भ्रष्टाचार की कोख में घुस दूसरों का हक़ मारने पर अमादा हैं !

"धन" और केवल उसकी ही महत्ता से जुड़ी जिस अवधारणा को इस फ़िल्म के जरिये स्थापित करने की पुरजोर कोशिश है वह सिर्फ "सरकार" विशेष का संदेश हो सकती है आदर्श साध्य नहीं !

खैर **अंत में इस फ़िल्म से जुड़ी सबसे अच्छी बात-** वह यह कि यह फ़िल्म विरोध करने वालों की भी जवाबदेही सुनिश्चित कराने और उनसे सवाल-जवाब कर पाने का साहस कर रही है!

अंत में विरोध करने वालों के लिए अपनी इन पंक्तियों के साथ मैं अपने लेख को समाप्त करूंगा-

"आप अनवरत केवल दूसरों का विरोध कर अपने दायित्वों से मुंह नहीं छिपा सकते! जवाब तो आपको भी देना ही पड़ेगा" !

सैराट

सिनेमा के बहाने उभरे सवाल

अध्ययन

नागराज मंजुले द्वारा निर्देशित 'सैराट' मराठी सिनेमा ने कई रिकार्ड पीछे छोड़ दिए है. श्वास सिनेमा से लेकर अब तक मराठी सिनेमा में जो भी नया अविष्कार हुआ है, सैराट ने इसमें एक अद्भुत नवोन्मेष भर दिया है. प्रादेशिक सिनेमा के इतिहास में सैराट ने चार चाँद लगा दिए है. सैराट को ढाल बनाकर कुछ असामाजिक तत्व मराठा समुदाय को अपने निशाने पर लिया, जबकि दूसरी ओर मराठा प्रेमियों ने सैराट के साथ-साथ नागराज मंजुले को बार-बार टार्गेट किया. सैराट के बहाने ऐसे असामाजिक तत्वों को मानों एक सुनहरा अवसर ही पैदा हुआ दिखाई दिया. नागराज मंजुले को जो दिखाना है या बताना है, उस मुद्दे को जानबूझकर नज़रअंदाज करने का प्रयास इन लोगों द्वारा किया गया. लेकिन इसका अधिक प्रभाव सिनेमा पर या उसके व्यवसाय पर नहीं हुआ. आज सैराट प्रादेशिक भाषा के इतिहास में सर्वाधिक कमाऊ फ़िल्म हो गयी है. 100 करोड़ के पार गई इस कलाकृति ने एक नया इतिहास रचा दिया है. बहरहाल विगत तीन-चार महीने से सैराट को लेकर बवाल खड़ा हुआ है. सिनेमा को जातीय एंगल को जोड़कर देखा जा रहा है. किसी भी जाति के सभी लोग बुरे नहीं होते बल्कि कुछ तत्व बुरे होते हैं. बदलाव आवश्यक है और बदलाव हो यही इस कृति से नागराज को दिखाना है. फिर भी अब तक बॉक्स ऑफिस पर सैराट का 'झिंगाट' प्रदर्शन शुरू होने के साथ-साथ कुछ जातिवादी तत्व अपनी विषैली सोच से उसे अलग नज़रिये से पेश कर रहे है. सिनेमा को जातिवाद के साथ-साथ अपने राजनितिक स्वार्थ के लिए भी कुछ लोग विरोध कर रहे हैं.

'शोषक सभी जातियों में हैं। हर जाति अपने से नीचे वाली जाति को तुच्छ समझती है और विवाह संबंध की बात होने पर हैवान बन जाती है. ऑनर किलिंग हर जाति में होती है और ऐसी अनेक घटनाएं महाराष्ट्र में घटी हैं.

सैराट की लोकप्रियता का बढ़ता ग्राफ

सैराट के ट्रेलर से शुरू हुआ विरोधी 'गेम' अब तक उसके विरोध में अब तक शुरू है. ट्रेलर के लांच होने के बाद 'मराठा' समर्थक वर्ग सोशल मिडिया के माध्यम से विरोध दर्शाने लगा. लंबी बहस के बाद किसी भी प्रकार की कांट-छांट के बगैर फ़िल्म प्रदर्शित हुई. जैसे-जैसे विरोध बढ़ने लगा, वैसे-वैसे तेज़ रफ़्तार से बॉक्स ऑफिस पर सैराट छाने लगी. नए-नए रिकार्ड बनाने लगी. फ़िल्म की टिकट न मिलने पर विवाद होने लगे. पायरसी हुई, सेंसर की प्रिंट लीक हुई. फिर भी सिनेमा को मिलनेवाला प्रतिसाद कम नहीं हुआ. फ़िल्म के सारे किरदार नए. कोई बड़ा स्टार नहीं. छोटे-छोटे किरदार तक सेलिब्रेटी हो गए. उनका घर से बाहर निकलना मुश्किल हो गया. सैराट दुबई, लंडन में भी दिखाई गई , वहां भी छाई रही. अभी भी महाराष्ट्र के कई सिनेमाहॉल में फ़िल्म चल रही है. मराठी सिनेमा ही नहीं भारत की किसी भी प्रादेशिक सिनेमा के इतिहास में ये फ़िल्म स्वर्णाक्षरों में दर्ज हो गई है. इतने शोरगुल में सबसे विशेष बात यह थी, कि नागराज इन विवादों पर कुछ भी नहीं बोले.

निलेश झाल्टे
संपर्क –09822721292
niileshzalte11@gmail.com

राजनीति पर हावी हुई कलाकृति

'सैराट' के ट्रेलर से लेकर मराठा समर्थक फ़िल्म के विरोध में मैदान में उतरे थे. सोशल मीडिया से लेकर शुरू हुआ यह विरोध कुछ स्थानों पर रास्ते पर भी उतर आया. सैराट बंद हो इसके लिए संगठनों द्वारा जगह-जगह ज्ञापनों की प्रतियां तहसील, जिलाधिकारी कार्यालयों में प्राप्त होने लगी. इस स्थिति में सिनेमा प्रदर्शित हुआ. यह सिनेमा मराठा समुदाय को अपमानित करनेवाला है, मराठों की स्टेटस पर सवाल उठानेवाले इस सिनेमा ने करोड़ों रूपए कैसे कमाएं? ऐसा सवाल उठाकर कांग्रेस के वरिष्ठ नेता तथा मराठा आरक्षण समिति के प्रमुख नारायण राणे के पुत्र नितेश राणे ने यलगार किया. ऐसे ही अन्य समाज या ब्राह्मण समाज पर सवाल खड़े किए जाते तो महाराष्ट्र शांत रहता? ऐसी चेतावनी नितेश ने दी. महाराष्ट्र में मराठा समुदाय की मातृशाखा 'मराठा सेवा संघ' ने नागराज मंजुले को छत्रपति संभाजी

महाराज की जयंती के उपलक्ष्य में पुरंदर किले पर आयोजित कार्यक्रम में युवराज छत्रपति संभाजीराजे भोसले की उपस्थिति में सम्मानित किया. यह सैराट को जातिवादी करार देनेवाले मराठा समर्थकों को बड़ा तमाचा था. इसके बाद महाराष्ट्र मुख्यमंत्री देवेंद्र फडणवीस, हिंदुत्ववादी संघटन शिवसेना के कार्याध्यक्ष उद्धव ठाकरे ने सैराट और नागराज मंजुले की वाहवाही की और सम्मान किया. इसके बाद विरोध के स्वर कमज़ोर होते दिखाई दिए. प्रादेशिक सिनेमा को इतनी ऊँचाई पर पहुँचाने वाले कलाकार को सम्मानित कर इन नेताओं ने अपनी राजनितिक समझदारी का उदाहरण पेश किया. हालाँकि सैराट और नागराज उनकी भी समझ से परे हैं.

प्रगतिवादी विचारधारा का वाहक

महाराष्ट्र में मराठा समुदाय के बारे में कहा जाए तो प्रगतिवादी आंदोलनों से जुड़े कई नाम सामने आते हैं. हालांकि उन महनीय लोगों का नाम यहाँ लेकर उनका जातिचरित्र सामने लाना होगा. लेकिन उनके नाम जातिवादी तत्वों के लिए आवश्यक है. राजर्षि शाहू महाराज ने खुद की बहन का अंतरजातीय विवाह किया था और उसके लिए कानून तैयार किया था. गोविंद पानसरे जैसे कई प्रगतिवादी विचारक जाति के अवकाश से मुक्त होकर सर्वसमावेशी समाज के लिए अंतिम सांस तक लड़े. निष्कर्ष यही कि पूरा समुदाय बुरा नहीं होता, बल्कि कुछ असामाजिक तत्व बदनामी का कारण होते हैं.

सैराट में एक संवाद है...

दादी- अरे वो बच्चा दूर से आया है, उसे पानी तो पिलाओ...

युवक- दादी वो ‘पाटिल’ है... (पाटिल मराठा समुदाय की एक शाखा है.)

दादी – क्यों, पाटिल को प्यास नहीं लगती?

यहाँ पर पानी की समानता का गुण दर्शाया है. पानी भेदाभेद नहीं करता. वरिष्ठ साहित्यकार विष्णु खरे ने कुछ सवाल उठाए हैं, जो वाकई महत्वपूर्ण है. वे कहते है, क्या दर्शकों ने सिर्फ उस सुपरिचित, लगभग टपोरी पहले घंटे को चाहा? क्या उन्हें बीच का "दिलवाले दुल्हनियां ले जाएंगे"- स्पर्श अच्छा लगा? क्या उन्हें कस्बाई माफिया द्वारा नायक-नायिका को चेज़ करने और उस पलायन में पराजित होने में आनंद आया? क्या वह आंध्र प्रदेश में अपने आदर्शवादी 'पवित्र' नायक-नायिका के सफल संघर्ष से खुश हुए? क्या वह जानना चाहते थे कि बाद की सुख-सपने वाली ज़िंदगी न चले? फिर यह दर्शक है कौन? इनके पैसे कैसे वसूल हुए? कितने दलित, कितने सवर्ण, किन जातियों के? कितने किशोर/युवा, कितने वयस्क बुद्धिजीवी? क्या सब सवर्णवाद के आजीवन शत्रु रहेंगे? क्या वाकई 'सैराट' कोई जातीय सामाजिक और राजनीतिक प्रश्न उठाती है? यह वह त्रासदी को ही उनका एकमात्र हल बनाकर पेश कर रही है तो उसमें कहां मनोरंजन हो रहा है कि फ़िल्म सुपर हिट है?

सोशल मीडिया में आलोचकों का मानना है कि सैराट में मराठा-पाटिल को बदनाम किया है. फ़िल्म में ‘आर्ची’ मुख्य पात्र है. वो महिला सक्षमीकरण का सशक्त उदाहरण है. कुछ लोगों ने आर्ची यानी रिंकू राजगुरु के जाति का पता लगाकर उसे ‘भीमकन्या’ का ख़िताब भी दे दिया. हालाँकि किसी भी जाति में पैदा होना और उस जाति का गर्व होना संयुक्तिक नहीं है. अपनी कृतित्व से जो मिलता हैं, वहीं अपने जीवन की सफलता है.

नागराज नाम की आँधी

सैराट प्रदर्शित होने के बाद कई लोगों ने नागराज की व्यक्तिगत जीवन में झांककर उसकी बदनामी करने का प्रयास भी किया. हालाँकि नागराज नाम की आँधी के सामने सारे नेस्तनाबूत हो गए. यह भी एक राजनीतिक षडयंत्र का हिस्सा था. नागराज मंजुले पिछड़े ‘वडार’ नामक समुदाय से आते हैं. उनकी राष्ट्रीय पुरस्कारप्राप्त लघु फ़िल्म ‘पिस्तुल्या’ और पहली फीचर फ़िल्म ‘फैंड्री’ ने भी जातिवादी तत्वों पर जोरदार प्रहार किया था. नागराज ने वडार समुदाय की ओर से दिया जानेवाला ‘वडार भूषण’ पुरस्कार लेने से इनकार किया, यह भी जातिवादियों पर तमाचा था. मंजुले का कहना है, शाहू, फुले, आंबेडकर अपने बाप हैं. तुमने मेरा छल किया इसलिए मैं तुम्हारा छल करूँ, यह बदले की भावना है. इसके आगे चलकर इंसान के रूप में जीना चाहिए. हमें दृश्य रूप में दुश्मन चाहिए, अमूर्त शत्रू के साथ लड़ने की ताकत नहीं हैं. डॉ. आंबेडकर के बारे में मेरा अधिक अभ्यास नहीं है, लेकिन उनकी प्रेरणा मेरे साथ हमेशा है. ‘जातीयता ख़त्म हुई है’ ऐसा कहनेवाले लोग या तो अज्ञानी है, या फिर उन्हें जाति का फायदा लेकर अपना स्वार्थ साध लेना है. जाति अभी भी भयावह रूप में टिकी हुई है, ऐसा मंजुले का मानना है. मंजुले की भूमिका स्पष्ट होने के बाद भी उनपर बहुत घटिया टिप्पणियाँ की गई. सबसे महत्वपूर्ण बात यह कि मंजुले अपनी कला के बलबूते ऊँचें पायदान पर हैं, जहां पर जात्यंधों की गालियाँ पहुँच नहीं सकती.

जयंत पवार के शब्दों में कहे तो 'शोषक सभी जातियों में हैं। हर जाति अपने से नीचे वाली जाति को तुच्छ समझती है और विवाह संबंध की बात होने पर हैवान बन जाती है. ऑनर किलिंग हर जाति में होती है और ऐसी अनेक घटनाएं महाराष्ट्र में घटी हैं. इसलिए बहुजन कलाकारों को यहां से आगे यथार्थ से भिड़ते हुए शोषण की इन भीतरी सलवटों का बहादुरी से सामना करना होगा। 'सैराट' ने यह चुनौती स्वीकार नहीं की मगर आगे की राह ज़रूर स्पष्ट की है.

हिंदी सिनेमा में आदिवासी प्रतिरोध की सशक्त दस्तक : चक्रव्यूह

FILM & translation STUDIES

अध्ययन

सन् 2012 में हिंदी सिनेमा के क्षितिज पर आदिवासी प्रतिरोध के स्वर को लेकर उपस्थित होती है फ़िल्म – चक्रव्यूह। 'प्रकाश झा' द्वारा निर्देशित इस फ़िल्म में आदिवासी जीवन के बहुविध आयामों को उकेरा गया है। फ़िल्म शुरू होने के पाँच मिनट के भीतर ही आदिवासी जीवन से अनिवार्यतः संबद्ध 'नक्सलवाद' की पृष्ठभूमि, उसके क्षेत्र और कारण पर प्रकाश डालती है। नक्सलवाद के जन्म की पृष्ठभूमि का उल्लेख करती हुई 'आज तक' की महिला पत्रकार बताती है कि –"आज से लगभग 45 साल पहले बंगाल के नक्सलवाड़ी गाँव में गरीब मज़दूर-किसानों ने जमीन के हक़ में लड़ाई के लिए जमींदार को ही मार डाला। बस, वहीं से जन्म हुआ 'नक्सलवाद' का।" अर्थात् यह नक्सलवाद अपने हक़ की लड़ाई के रूप में जन्मा। तो फिर क्यों देश के प्रधानमंत्री इस नक्सलवाद को देश का सबसे गंभीर आंतरिक खतरा मानते हैं? क्या उस नक्सलवाद का स्वरुप आज बदल गया है, जो अपने हक़ कि लड़ाई के रूप में जन्मा था? या फिर आज तक उस समस्या का हल ही नहीं निकाला गया, जो इस नक्सलवाद रूपी समस्या की जन्मदात्री है?

क्या उस नक्सलवाद का स्वरुप आज बदल गया है, जो अपने हक़ कि लड़ाई के रूप में जन्मा था? या फिर आज तक उस समस्या का हल ही नहीं निकाला गया, जो इस नक्सलवाद रूपी समस्या की जन्मदात्री है?

अब यहाँ पर यह प्रश्न स्वाभाविक ही है कि वे कौन सी आदिवासी समस्याएँ हैं, जिनकी वजह से नक्सलवाद इतना व्यापक होता जा रहा है कि देश के 200 से अधिक जिलों में वह फ़ैल चुका है? 'राम आहूजा' की दृष्टी से देखें तो, "आदिवासियों की प्रमुख समस्याएँ हैं : निर्धनता, ऋण, निरक्षरता, बंधुआपन, बीमारी, और बेरोज़गारी।" इसके अलावा एक और समस्या अत्यंत ही उल्लेखनीय है और वह है- विस्थापन की समस्या। आदिवासियों के लिए सबसे बड़ा मुद्दा विस्थापन का ही रहा है। देश के विकास की जब भी बात होती है तब आदिवासी अपने आप ही सामने आ जाते हैं। चूँकि सारा खनिज उस जमीन के नीचे दबा पड़ा है, जिस पर आदिवासी रहते हैं, इसलिए देश के विकास और पुनर्वास के नाम पर आदिवासियों को उनकी पुश्तैनी जमीन से उजाड़ दिया जाता है। इस पक्ष को फ़िल्म में बखूबी दिखाया गया है। मध्य प्रदेश के मुख्यमंत्री विकास की दलील पेश करते हुए कहते हैं कि –"देखिए! सीधी सी बात तो ये है कि उस जमीन में दबे नेचुरल रिसोर्सेज का जब तक हम इस्तेमाल नही करेंगे, तो विकास कैसे हो पाएगा? महान्ता जैसे बड़े ग्रुप के साथ ये 15000 करोड़ के प्रोजेक्ट का करारनामा साइन करने का लक्ष्य यही है। और फिर पुनर्वास की योजना बनकर पूरी तरह तैयार है।"

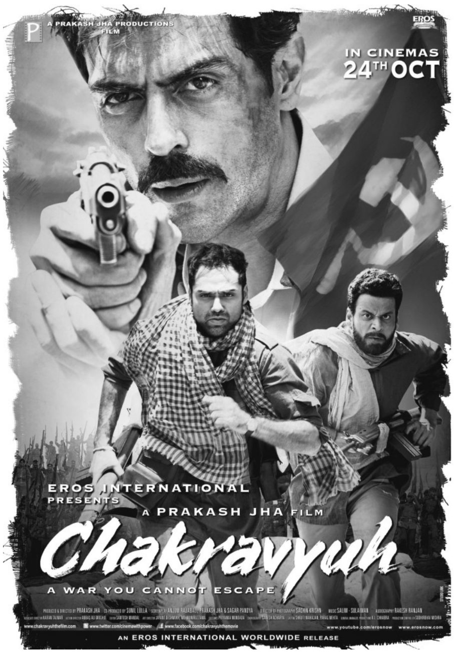

लेकिन, क्या सच में पुनर्वास या मुआवजे की योजना लागू होती है? इस संदर्भ में 'वीरेंद्र जैन' के उपन्यास 'पार' की अग्रलिखित पंक्तियाँ उल्लेखनीय हैं –"हम किसके द्वार पर जाकर रोएँ! किसे बताएँ कि यह झूठ है। जाने किसको थमा दिया सरकार ने मुआवजा।" यही वजह है कि नक्सलवाद धीरे-धीरे 200 जिलों में फैल गया। नक्सलवाद के इस कारण पर प्रकाश डालते हुए फ़िल्म में 'कृष्ण राज' एडवोकेट कहता है –"अरे भाई! यहाँ माओवादी आंदोलन फैलने की यही वजह है कि 65 सालों में यहाँ कोई डेवलपमेंट हुआ ही नही और आज आप विकास की बातें सिर्फ इसलिए कर रहे हैं कि दरअसल उसकी आड़ में आपको उनकी जमीन छीननी है। यहाँ लोहा है, मैगनीज है, कोयला है, बाक्साइट है और न जाने कितने मिनरल्स गड़े हुए हैं।" दरअसल इन्हीं बहुमूल्य खनिजों

निशांत मिश्रा

मो. 9527530688

की प्राप्ति हेतु ही आदिवासियों को विस्थापित किया जाता है। लेकिन अपनी जमीन और जंगल से विस्थापित होना इन आदिवासियों के लिए कैसा होता है? इसकी अनुगूँज 'गया पाण्डेय' के इस कथन में साफ़ तौर से परिलक्षित होती है –"जनजातीय समाज को जंगल से अलग करके देखना जल से मछली को तथा आत्मा को शरीर से अलग करके देखने के जैसा है।"

बावजूद इसके आदिवासियों का विस्थापन बदस्तूर जारी है। आदिवासी अगर लोकतांत्रिक तरीके से प्रतिरोध करता भी है तो उसकी जायज एवं लोकतांत्रिक आवाज़ को या तो अनसुना कर दिया जाता है या फिर नक्सलवाद के नाम पर दबा दिया जाता है। ऐसी स्थिति में वे या तो विस्थापित होने को मजबूर हैं या फिर हथियार उठाने को विवश हैं। फ़िल्म का नक्सली जोनल कमांडर कॉमरेड 'राजन'(मनोज वाजपेयी) अपने नंदीग्राम हमले का कारण मीडिया को बताते हुए कहता है- "सरकारी दलाल हमार बारे में खूनी, आतंकवादी जैसन अफवाह उडाये। हमार हर हमला गरीब आदिवासी की रक्षा के लिए है.................।हम कौनौ कीमत पे एक इंच भी आदिवासी जमीन न देबै। लाल सलाम।" राजन के इस साक्षात्कार से महान्ता ग्रुप अपना प्रोजेक्ट रोक देती है और शुरू होता है 'ग्रीन हंट' आपरेशन। इस ऑपरेशन में S.P.आदिल (अर्जुन रामपाल) के मुखबीर दोस्त कबीर (अभय देओल) की वजह से राजन पकड़ा जाता है और महान्ता इंटर्नेशनल प्रोजेक्ट फिर शुरू होता है। लेकिन, इस बार महान्ता ग्रुप प्रोजेक्ट और माइनिंग एरियाज पर बसे हुए 230 गाँवों को खाली करवाने के लिए उनके घरों को तुड़वा देते हैं। उन आदिवासियों की स्थिति ठीक वैसी ही नज़र आती है जैसी कि 'ग्लोबल गाँव के देवता' उपन्यास के उन आदिवासियों की होती है, जो भेड़िया अभयारण्य के नाम पर विस्थापित होने को अभिशप्त होते हैं। उपन्यास का पात्र 'रुमझुम असुर' प्रधानमंत्री को एक पत्र लिखवाता है, जिसमें पूरे आदिवासी समुदाय का दुःख एवं संत्रास स्पष्ट रूप से झलकता है –"हमारी बेटियाँ और हमारी भूमि हमारे हांथों से निकलती जा रही है। हम यहाँ से कहाँ जाएँगे?................सच कहें तो हम बिना चेहरे वाले इंसान होकर जीना नहीं चाहते श्रीमान्।"

यही कारण है कि वे नक्सलवादी चेहरा अपनाने को मजबूर है। फ़िल्म की इन पंक्तियों को सुनिए –

"मांग रहा, रे मांग रहा नया आदमी
जीने के अधिकार को।
अब न मिला तो हारकर
अपना हथियार को।"

लेकिन, ये हथियार सिर्फ हक़ और अच्छाई के लिए ही उठते हैं, ऐसा फ़िल्म दिखाती है। एरिया कमांडर कॉमरेड 'जूही' को पकड़ने के लिए पेट्रोलिंग स्पेक्टर 'माधवराम' गाँव के आदिवासी बच्चों को बंदूक की नोंक पर रखता है। आदिवासी बच्चों को बचाने के लिए जूही आत्मसमर्पण कर देती है और जवाबी हमला करने से अपने साथियों को रोकती हुई यह कहती है – "सोच-समझ के! औरत और बच्चे की जान खतरे में है।............अगर मैं निकल लूं तो मैं अकेली जाऊँगी। नहीं तो ये कुत्ते औरत–बच्चे किसी को न छोड़ेंगे।"

शायद यही कारण है कि एक गैर-आदिवासी मुखबीर 'कबीर' नक्सलियों की सार्थक हिंसा से सहमत होकर हथियार उठा लेता है। आदिवासियों के बीच रहकर उनके दुःख, उनकी पीड़ा, उनके संत्रास को देखकर उसका हृदय सरकारी तंत्र के खिलाफ घृणा से भर उठता है। वह अपने दोस्त S.P. आदिल से नक्सली पक्ष को रखते हुए कहता भी है- "बंदूक का आतंक तो कुछ नही है आदिल। गरीब को गरीब रखना, उसकी जमीन को लेना, उसके सारे अधिकारों को छीन लेना, असली आतंक तो ये है और ये तुम्हारी सरकार कर रही है और अब हर गरीब आदिवासी के खून में एक नया क्रोध उबल रहा है और वो क्रोध बंदूक की नली से ही निकलेगा।" अंततः कबीर से कॉमरेड 'आजाद' बना यह युवक आदिवासी हितों के लिए संघर्ष करता हुआ मारा जाता है और फ़िल्म समाप्त हो जाती है।

लेकिन इसके साथ ही फ़िल्म कुछ और ख़ास मुद्दों और सवालों से भी रूबरू करवाती है, जैसे- आदिवासी शिक्षा, पुलिस का आदिवासियों के प्रति रवैया, स्त्री-शोषण, बुद्धजीवियों का नक्सलियों के साथ खड़ा होना इत्यादि। इसके अतिरिक्त सरकार के असली चरित्र पर भी फ़िल्म प्रकाश डालती है। सरकार को 'महान्ता ग्रुप' के प्रोजेक्ट लगाने की परवाह है, जिसके लिए वो अपनी सारी ताकत लगा देती है, लेकिन उन 230 आदिवासी गाँवों कि परवाह नही है, जो इस प्रोजेक्ट से विस्थापित होने को मजबूर होंगें। यह वैसा ही है जैसा की 'ग्लोबल गाँव के देवता' उपन्यास में सरकार को भेड़ियों की परवाह तो है लेकिन लुप्तप्राय होते 'असुर' आदिवासियों की नही –"भेड़िया मन के बचावे ला आदमीनन के जान लेबैं। यह योजना है कि जान मारने की स्कीमा।" और यह सब होता है मुट्ठी भर लोगों के व्यक्तिगत स्वार्थ के लिए। लेकिन, इसे किया जाता है देश के विकास के नाम पर। इस विकास के स्वरुप पर ही प्रश्नचिन्ह लगाती हुई और भावी भविष्य के लिए सचेत करती हुई फ़िल्म की अंतिम पंक्तियाँ हैं – "देश की 25% आमदनी पर बस कुल 100 परिवारों का कब्ज़ा है, जबकि हमारी 75% आबादी रोजाना 20 रुपये से भी कम पर बसर करने को मजबूर है। इस अंतर से जन्मा अविश्वास बढ़ता ही जा रहा है और शायद वक़्त हमारे हाथ से निकलता जा रहा है।"

हमें इस हाथ से निकलते वक़्त को रोकना होगा और इस समस्या पर गंभीर चिंतन कर एक ठोस कदम उठाना होगा। और वो ठोस कदम कम-से-कम बंदूक का तो नहीं ही होना चाहिए। दरअसल, नक्सलवाद को बंदूक की नोंक पर नही ख़त्म किया जा सकता, क्योंकि ये तो वही बात होगी की किसी जहरीले पेड़ को खत्म करना हो तो उसकी पत्तियाँ काट दो। दरअसल नक्सलवाद की जड़ आदिवासी समस्याएँ हैं जिन पर गंभीरतापूर्वक विचारकर यथाशीघ्र खत्म करने की जरूरत है। जैसे ही ये आदिवासी समस्याएँ खत्म होंगी वैसे ही आदिवासियों में व्याप्त असंतोष ख़त्म होगा और नक्सलवाद स्वयं ही काल के गाल में समां जाएगा। 'चक्रव्यूह' इस मुद्दे पर गंभीरता से मंथन करके बनाई गई फ़िल्म है। 'केदार प्रसाद मीणा' का मंतव्य भी कुछ ऐसा ही है –"प्रकाश झा ने नक्सलवाद संबंधी घटनाक्रमों पर शोध कर एक ठीक-ठाक सामाजिक-राजनीतिक मसाला फ़िल्म तैयार की है। इसकी दो विशेषताएँ हैं – पहली यह कि फ़िल्म नक्सलवाद और आदिवासियों के ताजा-तरीन घटनाक्रमों को ध्यान में रखती है, जैसे नंदीग्राम व वेदांता प्रकरण आदि को, इसलिए कुछ विश्वसनीय बनती है। दूसरी बात कि प्रकाश झा किसी पक्ष के साथ नही खड़े हैं। कम-से-कम सरकारी पक्ष के साथ नहीं खड़े हैं।" इस प्रकार आदिवासी प्रतिरोध की सशक्त दस्तक हिंदी सिनेमा के क्षितिज पर दिखाई देती है। आज आवश्यकता इस बात की है कि इस ज्वलंत और गंभीर मुद्दे पर ठहरकर गंभीरतापूर्वक विचार किया जाए और देश के नीति-नियंताओं की सक्रिय भूमिका के द्वारा परिवर्तन के लिए सार्थक हल निकाला जाए।

- सामाजिक समस्याएँ : राम आहूजा , Rawat publications ,satyam apts, sector 3, jawahar nagar, jaipur- 302004(INDIA), Reprinted : 2015, पृष्ठ सं – 155.
- पार : वीरेंद्र जैन, वाणी प्रकाशन 4695, 21-ए, दरियागंज , नयी दिल्ली – 110002, आवृत्ति : 2012. पृष्ठ सं – 124-125.
- भारतीय जनजातीय संस्कृति : गया पाण्डेय, कंसैप्ट पब्लिशिंग कंपनी , नई दिल्ली – 110059. प्रथम संस्करण : 2007, पृष्ठ सं – 334.
- ग्लोबल गाँव के देवता : रणेंद्र, भारतीय ज्ञानपीठ , 18 , इंस्टिट्यूशनल एरिया ,लोदी रोड , नयी दिल्ली – 110003. पहला संस्करण : 2013 पृष्ठ सं – 78, 88.
- समसामयिक सृजन , अक्टूबर-मार्च 2012-2013 (संयुक्तांक) : महेंद्र प्रजापति, एच ब्लॉक, मकान सं – 189 विकासपुरी, नई दिल्ली – 110018. पृष्ठ सं – 295.

पर्यटन में भाषा और अनुवाद की भूमिका

FILM & Translation STUDIES

अध्ययन

भारत भाषाई विविधता का देश है। भाषा के माध्यम से आचार-विचार, संस्कृति, खानपान, रीति-रिवाज आदि को जान समझ सकते हैं । पर्यटन के माध्यम से न केवल विचार एवं संस्कृति का आदान-प्रदान होता है, बल्कि भाषाई बंधन शिथिल हो जाते हैं और सभी भाषाएँ विदेशी भाषा के शब्दों का अंगीकरण करती हैं।

डॉ. हर्षा रामकृष्णकराव वडतकर

ज्ञान-विज्ञान और व्यवहार के प्रत्येक क्षेत्र के विकास में भाषा की महती भूमिका है। पर्यटन के क्षेत्र में भाषा दो प्रकार के कार्य करती है- प्रथम सूचनाओं का प्रसार-प्रचार और दूसरा अनुवाद द्वारा नवनवीन ज्ञान, विचार एवं सूचनाओं को संबंधित भाषाओं में उपलब्ध कराना जो पर्यटकों को किसी संस्कृति और समाज के रहन-सहन आदि के संदर्भ में जानकारी उपलब्ध करती है। पर्यटन का क्षेत्र अन्य क्षेत्रों की भाँति ही भाषा और अनुवाद से जुड़ा हुआ विषय है। अनुवाद पर्यटन से संबंधित सूचनाओं के प्रसार-प्रचार कर इस क्षेत्र के विकास में योगदान देता है। अत: पर्यटन के क्षेत्र में भाषा और अनुवाद की भूमिका महत्वपूर्ण है।

पर्यटन का क्षेत्र

माना जाता है कि ‘पर्यटन’ शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग 19 वीं शताब्दी में हुआ। प्रारंभ में मानव अपनी मूलभूत आवश्यकताओं के लिए भटकता रहता था। यहीं से यात्रा का प्रारंभ हुआ है। अर्थात मनुष्य किसी भी उद्देश्य से यात्रा करता है। पहले न केवल अधिकतर लोग धार्मिक पर्यटन की ओर ही आकर्षित होते थे, बल्कि आज से 30 वर्ष पहले यात्रा का आनंद लेना कुछ समृद्ध और साहसी लोगों तक ही सीमित था वर्तमान समय में विकसित एवं विकासशील राष्ट्र में उच्च जीवन स्तर तथा परिवहन उद्योग में तीव्र क्रांति के फलस्वरूप विदेशों में अवकाश व्यतीत करना मध्यम एवं निम्न वर्गीय परिवारों के लिए भी संभव हो गया।1 वर्तमान में पर्यटन का स्वरूप व्यापक हो गया है। जागतिक पर्यटन संगठन ने ऐतिहासिक पर्यटन, धार्मिक पर्यटन, ईको पर्यटन (Eco-Tourism), चिकित्सा पर्यटन, सांस्कृतिक पर्यटन, साहसी पर्यटन, शैक्षणिक पर्यटन आदि पर्यटन के प्रकारों को मान्यता प्रदान की है।2 आज सामाजिक पर्यटन प्रकार भी उभरकर सामने आया है। सामाजिक पर्यटन के माध्यम से सामाजिक समस्याओं को लेकर कार्य करनेवाली संस्थाओं का परिचय होता है, यह पर्यटन ज्ञान में अधिक वृद्धि करता है।’ 3

‘पर्यटन’ शब्द का प्रयोग अंग्रेज़ी के ‘टूरिज़्म’ शब्द के लिए होता है। ‘टूरिज़्म’ शब्द का संबंद्ध लैटिन भाषा के ‘टूअर’ से है, परंतु वर्तमान समय में पर्यटन शब्द अनेक अर्थ रखता है। पर्यटन का अर्थ- यात्रा, आराम, मनोरंजन, उद्योग, भ्रमण करना होता है। 4

पर्यटन को निम्नानुसार परिभाषित कर सकते हैं-

- पर्यटक जब अपने निवास स्थान से दूर किसी उद्देश्य से यात्रा करता है, तो उसे पर्यटन कहा जाता है।
- पर्यटन का अर्थ आराम और ज्ञान प्राप्ति के लिए यात्रा करना है।5

पर्यटन की दृष्टि से भारत एक विस्तृत प्रेक्षणीय क्षेत्र है, जिसका एक मुख्य कारण यहाँ की विभिन्न संस्कृतियाँ व प्राकृतिक आकर्षण है। भारत की अपनी प्राचीन सभ्यता है। यह सभ्यता हमारे धर्म, रीति-रिवाज, रहन -सहन आदि से झाँकती है। भारत के नृत्य एवं संगीत, प्राकृतिक सौंदर्य, ऐतिहासिक इमारतें, त्यौहार पर्यटकों लुभाते हैं। पर्यटन व्यक्तिविकास का साधन माना जाता है। मनोरंजन, ज्ञानार्जन, समय का सदुपयोग, नई खोज, नई दृष्टि, नए विचार, तथ्य एवं जानकारियों का संकलन तथा विचारों का आदान-प्रदान आदि कई उद्देश्यों से पर्यटन किया जाता हैं। इसके अलावा राष्ट्र के आर्थिक क्षेत्र में विदेशी मुद्रा अर्जित करने में योगदान एवं रोज़गार के विभिन्न स्रोत उपलब्ध कराने में पर्यटन का अपना अद्वितीय स्थान रहा है।6 किसी राष्ट्र के विकास में पर्यटन न केवल आर्थिक क्रिया है, बल्कि विश्व के विभिन्न राष्ट्रों में सांस्कृतिक परिवर्तन लाने का महत्वपूर्ण माध्यम भी है’।7 राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर पर्यटन के क्षेत्र ने अपना महत्वपूर्ण स्थान बना लिया है।

भारत भाषाई विविधता का देश है। भाषा के माध्यम से आचार-विचार संस्कृति, खानपान, रीति-रिवाज आदि को जान समझ सकते हैं । पर्यटन के माध्यम से न केवल विचार एवं संस्कृति का आदान-प्रदान होता है, बल्कि

भाषाई बंधन शिथिल हो जाते हैं और सभी भाषाएँ विदेशी भाषा के शब्दों का अंगीकरण करती हैं। प्रयुक्त शब्दों को व्यापक रूप से अपनी भाषा की प्रकृति के अनुसार लिप्यंतरित करती है। अन्य भाषा के नए-नए शब्दों को भी ग्रहण करने की यह प्रक्रिया भाषा विकास मे सहायक होती है।

पर्यटन में भाषा और अनुवाद

- स्रोत भाषा के कथ्य को यथासंभव लक्ष्य भाषा में रूपांतरित करना अनुवाद है। विश्लेषण, अंतरण तथा पुनर्गठन के सोपानों से गुजरकर अनुवादक स्रोत भाषा के संदेश को लक्ष्य भाषा में रूपांतरित करता है। अनुवाद दो भाषाओं के मध्य सेतु का कार्य करता है। पर्यटन से संबंधित किन्हीं महत्वपूर्ण सूचनाओं का अनुवाद से पर्यटकों को सुविधा होती है। अत: पर्यटक संबंधित स्थान, वहाँ की संस्कृति, वातावरण, समुदाय, आदि के संबंध में सरलता से जान सकते हैं । यह अनुवाद ही है जिसके माध्यम से सारा विश्व एक सुत्र में बंध गया है।
- 'भारतीय पर्यटन और यात्रा प्रबंध संस्थान' भारत में पर्यटन के विकास हेतु प्रयासरत है। यह एक स्वायत्तशाशी संस्था है, जो पर्यटन उद्योग हेतु व्याहवसायिक रूप से प्रशिक्षित कर्मिकों की आवश्यकताओं को पूरा करता है।8 इसमें भाषा और अनुवाद की महत्वपूर्ण भूमिका होती है, यह संस्थान पर्यटन और यात्रा प्रबंध संबंधी कार्यशालाएँ, विचार-गोष्ठियाँ और अधिकारी प्रशिक्षण आदि कार्यक्रमों का आयोजन भी है। संस्थान, विभिन्न विश्वविद्यालयों में स्नातकोत्तर स्तर के पाठ्यक्रम के संचालन में भी सहयोग देता है, इसमें भाषा के कुछ विकल्प दिए जाते हैं । पर्यटन मंत्रालय द्वारा होटल, रेस्तरा और अन्य पर्यटन उद्योगों की बढ़ती हुई माँग को पूर्ण करने हेतु प्रशिक्षित कर्मी तैयार करने संबंधी कार्य को प्राथमिकता दी जा रही है। इसके लिए पर्यटन विभाग द्वारा देश में 19 होटल प्रबंधन, खान-पान टेक्नॉलॉजी, पाक कला संस्थान स्थापित किए गए। ये संस्थार होटल प्रबंध, खान-पान टेक्नोलॉजी, पोषाहार और खाद्य तथा पेय सेवाओं में शिल्प डिप्लोमा पाठ्यक्रम संचालित करते हैं । प्रशिक्षणोपरांत संबंधित क्षेत्रों में विभिन्न राज्य सरकारों के पर्यटन विभागों द्वारा संचालित पर्यटन निगम के होटल, राज्य सरकार व भारतीय पर्यटन विकास निगम के होटल, एयरवेज कंपनीयों में टिकट आरक्षण, प्रचार, ट्रेवल ऐजेंट व टूर ऑपरेटरों के रूप में, गाईड के आदि रूप में रोज़गार प्राप्त किया जा सकता है। अत: इससे संबंधित पाठ्यक्रम निर्माण एवं संचालन में भाषा और अनुवाद की महत्वपूर्ण भूमिका रहती है।
- संगीत, सभा आदि विभिन्न कार्यक्रमों के आयोजन द्वारा पर्यटकों का मनोरंजन किया जाता है, इसमें भाषा की महत्वपूर्ण भूमिका है। पर्यटन संबंधी सूचनाओं का प्रसार-प्रचार करने के लिए सलाहाकार की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। भारत व विदेशों में सलाहाकार तथा प्रबंध सेवा उपलब्धि कराने में भाषा की महत्वपूर्ण भूमिका है।
- पर्यटन एक सांस्कृतिक प्रघटना है, जिसने मानव समुदाय को प्रभावित किया है। जब पर्यटक का परिचय एक भिन्न सामाजिक वातावरण से होता है और वह उसके बारे में जानने का प्रयास करता है तब मेजबान और अतिथि के मध्य भाषा एक महत्वपूर्ण सेतु का कम करती है। सामाजिक, सांस्कृतिक विचारों का आदान-प्रदान भाषा के माध्यम से होता है।
- राष्ट्रीय एकता को बढ़ावा देने का कार्य भी भाषा और अनुवाद करता है। भाषा के बिना कोई व्यक्ति पर्यटन स्थलों के बारे में सूचनाओं और जानकारी से अवगत नहीं हो सकता।
- भारत में हर साल लाखों विदेशी पर्यटक आते हैं, जिससे हमारे बाज़ारों को लाभ मिलता है। यहाँ भी भाषा अपनी भूमिका निभाती है।

पर्यटन संबंधी प्रशिक्षण कार्य आज भी चल रहा है, इसके अलावा यात्रा संबंधी पुस्तकें, यात्रा पत्रिकाएँ, समाचार-पत्र, पर्यटन फ़िल्में आदि में भी भाषा और अनुवाद की भूमिका है। 'संघविश्वप महासभा जो वर्ष में एक बार बुलाई जाती है, संघ के सूचारू संचालन के लिए सलाह प्रदान करती है। संघ अंतरराष्ट्रीय रेल संघटन को मदद करती है, जिसके द्वारा संयुक्ती रेल टुअर्स एवं व्यावसायिक शिक्षा पाठ्यक्रमों को संचालित किया जाता है, पत्राचार पाठ्यक्रमों को व्यवसाय संबंधी लोगों हेतु उपलब्ध कराता है, इसके अलावा बुकिंग तथा कैन्सिलेशन जैसे प्रावधानों का निर्धारण एवं नियमन सुनिश्चित करना भी संघ द्वारा बुलाई गई महासभाओं का कार्य है।9 इस रूप में भी पर्यटन, भाषा और अनुवाद का संबंध है।

पर्यटन के तकनीकी विकास में भाषा और अनुवाद का योगदान

- होटलों में बुकींग करना, बिल बनाना आदि कार्य सॉफ्टवेयर के माध्यम से किए जा रहे हैं, जिससे समय की भी बचत हो रही है और काम भी तीव्र गति से हो रहा है, इसमें हिंदी, अंग्रेज़ी भाषा के विकल्प होते हैं, जिसका चयन पर्यटक अपनी सुविधानुसार करते हैं।

- मनोरंजन हेतु पर्यटक गुगल सॉफ्टवेयर के माध्यम से अपना मनोरंजन कर सकते हैं, जिसमें विभिन्न स्थलों के नृत्य, संगीत, फ़िल्म आदि के बारे में विस्तृत जानकारी मिलती है।
- 'ट्रैवल अँड टूरिज़्म' सॉफ्टवेयर के माध्यम से पर्यटक विभिन्न स्थानों पर की यात्रा के बारे उनकी भाषा में सुचनाएँ प्राप्त कर सकते हैं।

अत: यह कहा जा सकता है कि पर्यटन, भाषा और अनुवाद आपस में जुड़े हुए विषय है। यदि पर्यटन के क्षेत्र का विकास करना हो तो भाषा तथा अनुवाद का ही सहारा लेने की आवश्यकता है। बगैर भाषा और अनुवाद के पर्यटन का विकास असंभव है। वर्तमान में पर्यटन क्षेत्र के तकनीकी विकास में भाषा और अनुवाद पर्यटकों के सुविधा हेतु संप्रेषण सेतु के रूप में कार्य कर रहे हैं। पर्यटन अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भी आकर्षण का केंद्र है। अंतरराष्ट्रीय स्तर पर पर्यटन, भाषा और अनुवाद देश-विदेश को आपस में जोड़ने का और सांस्कृतिक आदान-प्रदान करने का भी कार्य करती है। इस संदर्भ में पर्यटन के क्षेत्र में भाषा और अनुवाद की महत्वपूर्ण भूमिका है।

1. शोध दृष्टि, जर्नल ऑफ ऑल रिसर्च, संपादक डॉ. अभीजीत सिंह, प्रकाशन श्रिजन समिती, वाराणसी, जुलाई-सितंबर 2011, ISSN 0976.6650 पृ. सं.10
2. लोकराज्य, (पर्यटन विशेष पत्रिका) प्राजक्ता लंगवारे-वर्मा, अक्तूबर, 2009, पृ.सं.21
3. वही, पृ.सं.29
4. संस्कृति, पयार्वरण और पर्यटन, पृ.स. 19
5. पर्यटन एवं पर्यटन उत्पाद, डॉ.संजय कुमार शर्मा, पृ.स. 13
6. पर्यटन व्यवसाय एवं विकास, जगदीश सिंह, पृ. सं. 20
7. पर्यटन व्यवसाय एवं विकास, जगदीश सिंह, पृ. सं. 20
8. पर्यटन व्यवसाय एवं विकास, जगदीश सिंह, पृ. सं. 129
9. पर्यटन सुविधाओं का प्रबंधन, राजेश गोयल, सं 2011, प्रकाशन दरियागंज नई दिल्ली पृ. सं.166

हिंदी साहित्य के विकास में अनुवाद की भूमिका

FILM & Translation STUDIES

अध्ययन

हिंदी साहित्य लेखन की परंपरा में तत्कालीन समाज में जिन बिंदुओं को केंद्र में रखकर रचनाएँ हुई, उनमें से कुछ अनुवाद के माध्यम से हुई है। इसके अतिरिक्त तत्कालीन दौर में हिंदी भाषा का विकास, लिपि निर्धारण, मानकीकरण जैसे तमाम प्रश्नों का निदान अनुवाद के ही माध्यम से संभव हुआ। अनुवाद न केवल हिंदी साहित्य के अंतर्गत नई विधाओं के विकास का माध्यम बना, अपितु हिंदी साहित्य निधि के विकास और समृद्धि का भी कारण बना। हिंदी भाषा की शब्द संपदा कई भाषाओं के शब्दों के अनुवाद का रूप है, जिसमें सबसे ज्यादा संस्कृत, उर्दू, अरबी-फारसी, अंग्रेज़ी आदि भाषाओं के शब्दों को अनुवाद रूप में हिंदी में ग्रहण किया गया है। इन सभी भाषाओं के समेकित रूप से मिलने के बाद हिंदी का रूप निर्माण होता है। इनके बिना जो हिंदी लिखी जाएगी, वह न तो सर्वजन ग्राह्य हो सकती है और न तो संप्रेषणीय ही।

किसी भी रचनात्मक विधा की बात कर ली जाए, यह अकाट्य सत्य है कि वह अपने रचयिता के विचारों और सोंच का ही बहुत हद तक प्रतिबिंब होती है और रचनाकार बहुत हद तक स्वयं को ही ऐसे माध्यमों के जरिये अभिव्यक्ति दे रहा होता है.

हिंदी भाषा साहित्य के निर्माण में संस्कृत साहित्य, बांग्ला साहित्य, पाश्चात्य साहित्य के साथ-साथ अन्य दूसरी भारतीय भाषाओं के साहित्य का भी अनुवाद के माध्यम से योगदान रहा है। हिंदी साहित्य में इन सभी भाषाओं के साहित्य को लाने के लिए इन भाषाओं की सुप्रसिद्ध एवं लोकप्रिय कृतियों का अनुवाद हिंदी में किया गया। इन अनुवादों के पीछे अनुवादकों के अपने सामाजिक व राजनीतिक विचार व उद्देश्य थे। हिंदी नवजागरण में अनुवाद का महत्वपूर्ण योगदान है। अनुवाद के माध्यम से न केवल हिंदी भाषा का निर्माण व विकास होता है, बल्कि नया साहित्य व नए समाज का निर्माण भी अनुवाद की ही राह पर चल कर हुआ है। हिंदी भाषा के साहित्य व समाज में एक बड़ा परिवर्तन अनुवाद के द्वारा हुआ है। हिंदी नवजागरण के विकास रूप में हिंदी साहित्य के अंतर्गत अनुवाद की महती भूमिका रही है।

खड़ी बोली हिंदी व हिंदी साहित्य का विकास और अनुवाद

खड़ी बोली हिंदी का विकास अनुवाद के माध्यम से होता है। इसके बारे में डॉ॰ रमण सिन्हा ने लिखा है कि- "खड़ी बोली हिंदी गद्य की प्राचीनतम पुस्तक राम प्रसाद 'निरंजनी' की भाषा योग वशिष्ठ (1741) को माना जाता है, जो वशिष्ठ कृत संस्कृत वेदांत ग्रंथ 'योग वशिष्ठ' का अनुवाद है।"1 इस रूप में खड़ी बोली हिंदी का विकास भी अनुवाद रूप में ही शुरू होता है। खड़ी बोली हिंदी की जो चार आदि कृतियाँ मानी जाती हैं, जिनमें 'रानी केतकी की कहानी' (1801), 'सुखसागर' (1803), 'नासीकेतोपाख्यान' (1803) और 'विद्यासुंदर' इनमें से 'उदयभान चरित' को छोड़कर क्रमशः प्रथम दो कृतियाँ संस्कृत साहित्य से और चौथी बांग्ला साहित्य से हिंदी में अनूदित हैं। इन कृतियों से ही हिंदी की शुरुआत होती है।

अनुराधा पाण्डेय
पीएच-डी. (हिंदी अनुवाद)
भारतीय भाषा केंद्र
जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय
नई दिल्ली- 110067
Email- anu.pantran@gmail.com

हिंदी नवजागरण का विकास विभिन्न भाषाओं की कृतियों के अनुवाद के माध्यम से शुरू हुआ। यह अनुवाद हिंदी साहित्य के विकास की दृष्टि से प्रथमतः हुआ। हिंदी के विकास के समय में साहित्य में पुस्तकों की

बहुत कमी थी। इस कमी को तात्कालिक तौर पर पूरा करने के लिए हिंदी में अनुवाद कार्य किया गया। एक कारण यह भी था कि, एक लंबे समय से प्रयोग में आने वाली उर्दू को कमतर आँका जा सके और हिंदी साहित्य को श्रेष्ठ बताया जा सके। लोगों में साहित्य के प्रति रूचि पैदा हो। कविता का प्रचलन हिंदी प्रदेश में प्राचीन समय से था। यही कारण है कि एक लंबे समय तक काव्य की भाषा के रूप में अवधी और ब्रज ही बने रहे। खड़ी बोली का प्रयोग बहुत कम किया जाता था और अगर किया भी जाता था तो इन बोलियों के साथ मिश्रित रूप में ही।

सन् 1857 के पश्चात्त जब भारतेंदु का आगमन हिंदी साहित्य में होता है और हिंदी लेखन के साथ-साथ अनुवाद को भी बढ़ावा मिलता है। भारतेंदु ने व इनके समकालीन लेखकों की श्रद्धा व निष्ठा से ही हिंदी को भाषा के रूप में स्वीकृति मिलती है। जनता में हिंदी की पाठ्य-पुस्तकों के प्रति रुझान को बढ़ाने की दृष्टि से नए साहित्य का सृजन किया जाता है, जिससे पाठकों की रुचि के अनुसार पाठ्य पुस्तकें उपलब्ध हो सकें। हिंदी के विकास के समय में साहित्य के साथ-साथ विधा के रूप में भी साहित्य की कमी थी। हिंदी में सबसे पहले काव्य लेखन की शुरुआत हुई। अनुवाद के माध्यम से संस्कृत की कृतियों के हिंदी में काव्यानुवाद हुए। इस विधा रूप में कमी को पूरा करने के लिए संस्कृत से व अंग्रेज़ी की कविताओं के अनुवाद हुए।

भारतेंदु युग के दौरान जो भी हिंदी में काव्यानुवाद, नाट्यानुवाद या फिर उपन्यासों के अनुवाद हुए उनका मुख्य उद्देश्य हिंदी साहित्य की समृद्धि था। हिंदी साहित्य में इस कमी को पूरा करने के लिए संस्कृत से कई सारे अनुवाद हुए। इन अनुवादों के माध्यम से ही हिंदी साहित्य के क्षेत्र में साहित्य की वृद्धि होती है और दूसरे भाषाओं का नया साहित्य हिंदी में आता है।

हिंदी की नई विधाओं के विकास में अनुवाद की भूमिका

हिंदी साहित्य में नई-नई विधाओं का विकास भी अनुवाद के ही माध्यम से होता है, जिनमें मुख्य विधाओं के साथ-साथ गौण विधाओं का विकास भी अनुवाद के ही माध्यम से हुआ। मुख्य विधाएँ, जैसे- कविता, नाटक, उपन्यास और कहानी आदि का विकास अनुवाद के माध्यम से हुआ।

हिंदी में काव्य विधा के विकास रूप में अंग्रेज़ी काव्य साहित्य से अनुवाद हुए, जिसमें गोल्डस्मिथ की कृति 'हरमिट' का अनुवाद 'योगी' नाम से किया गया। यह कृति एक प्रेम कथानक पर आधारित है। इस कथानक का "नायक एडविन एक युवक होता है, जिसके पास न तो पैसे हैं और न तो सत्ता। इस कविता की नायिका एँजलीना है, जो एक जमींदार की बेटी होती है। एडविन का प्यार एँजलीना से होता है और यह अपने प्यार का इजहार नायिका से करता है, लेकिन नायिका इसे माना कर देती है। इसके बाद नायक सब कुछ छोड़कर एक 'योगी' बन जाता है। जब एँजलीना को यह सब पता चलता है, तो वह पुरुष के वेश में नायक के पास जाती है। एडविन, एँजलीना को पुरुष के पोशाक में नहीं पहचान पाता। एँजलीना दोनों के प्यार के बारे में पिछली कहानी बताती है। इसके बाद एडविन उसे पहचान जाता है। इसके बाद दोनों का मिलन होता है और इस रूप में कविता समाप्त होती है।"2 इस कविता का अनुवाद विशेष रूप से हिंदी साहित्य में कविता विधा को स्थापित करने की दृष्टि से हुआ।

अंग्रेज़ी कविताओं के अनुवाद के माध्यम से हिंदी में शोकगीत की परंपरा, सोनेट्स अर्थात चतुष्पदियाँ लिखने की परंपरा का विकास हुआ। शोकगीत लिखने की शुरुआत ग्रे की कविता *'Elegy Written in A Country Churchyard'* से हुई। यह कविता मुख्य रूप से लेखक के अपने अनुभव पर आधारित है। "कविता एक कब्रगाह से शुरू होती है। जहाँ अपने चारो तरफ के परिवेश को देखकर और उसके बदलते हुए नकारात्मक स्वरूप की कल्पना करके कवि परेशान है। गाँव में रहने वाले लोगों की तुलना शहर के लोगों से करता है और यह सोचकर परेशान होता है कि लोग थोड़े में ही संतुष्ट क्यों नहीं रहते। बहुत कमाने की इच्छा में अपना व प्रकृति का भी विनाश करते हैं, और इन सबके बावजूद भी मृत्यु के पश्चात इन्हें

याद कौन करता होगा। इस व्यस्त जीवन में क्या किसी के पास इतना वक्त है कि वह किसी की मृत्यु के बाद बैठकर शोक मनाएँ? मृत्यु तो जीवन की एक सच्चाई है, सब इसे भूले रहते हैं। इन सबके बारे में सोच कर व देख कर खुद को दूसरे लोगों से अलग कर लेता है और उनके लिए शोक करता है। मृत्यु की वास्तविकता को स्वीकार करता है और इसी के साथ कविता समाप्त होती है।"3 इस प्रकार इस कविता के अनुवाद से शोक गीत से परिचय हिंदी साहित्य का होता है।

हिंदी में चतुष्पदी का लेखन अंग्रेज़ी के 'सोनेट्स' के अनुवाद से शुरू होती है, जिसमें अंग्रेज़ी के कई लेखकों के सोनेट्स के अनुवाद हुए। शेक्सपियर की कविता 'फ्रेंड्स', जो कि एक सोनेट है, हिंदी में इसका अनुवाद 'मित्र' नाम से हुआ। इससे पूर्व हिंदी में चतुष्पदी लेखन की परंपरा नहीं थी।

हिंदी में द्विवेदी युग के पश्चात छायावाद का प्रादुर्भाव होता है। इसके शुरुआत का श्रेय मुकुटधर पाण्डेय को जाता है। उन्होंने ही हिंदी साहित्य में सर्वप्रथम छायावाद का प्रयोग किया था और इसकी विशेषताओं से युक्त कविता लिखी थी। इस युग के महान हस्ताक्षर प्रसाद, पंत, महादेवी और निराला माने जाते हैं। छायावाद के दौरान लिखी जाने वाली कविताओं का सबसे ज़्यादा महत्व है। हिंदी में छायावाद बांग्ला कवि रवींद्रनाथ ठाकुर की आध्यात्मिक रहस्यवाद से पूर्ण कविताओं के प्रभाव रूप में शुरू होती है, जो कि हिंदी साहित्य की अपनी मौलिक उपज न होकर बांग्ला भाषा से शुरू होती है। बांग्ला भाषा में यह शुरुआत अंग्रेज़ी की कविताओं के अध्ययन के पश्चात शुरू हुआ। इस रूप में हिंदी में छायावादी कविताओं की शुरुआत भी अनुवाद के ही माध्यम से हुआ। छायावाद के बारे में विजेंद्र स्नातक लिखते हैं कि- "छायावाद की कविता की पहली दौड़ तो बंग-भाषा की रहस्यात्मक कविताओं के सजीले और कोमल मार्ग पर हुई। पर उन कविताओं की बहुत-कुछ गतिविधि अंग्रेज़ी वाक्य खंडो के अनुवादों द्वारा संगठित देख, अंग्रेज़ी वाक्यों से परिचित हिंदी कवि सीधे अंग्रेज़ी से ही तरह-तरह के लाक्षणिक प्रयोग अपनी रचनाओं में जड़ने लगे। कनक प्रभात, विचारों में बच्चों की 'साँस', 'स्वर्ण समय', 'प्रथम मधुमास', 'स्वप्निल कांति' ऐसे प्रयोग उनकी रचनाओं के भीतर इधर-उधर मिलने लगे। केवल भाषा के प्रयोग वैचित्र्य तक ही बात न रही, अनेक यूरोपीय वादों और प्रवादों का प्रभाव भी छायावाद कही जाने वाली कविताओं के स्वरुप पर कुछ न कुछ पड़ता रहा।"4 इस प्रकार हिंदी में छायावादी कविताओं की शुरुआत बांग्ला से और अंग्रेज़ी की कविताओं से होती है। इस रूप में इसे स्वीकार किया जाना चाहिए कि हिंदी में नयी विधाओं के विकास के रूप में पाश्चात्य साहित्य का बहुत योगदान रहा है। साहित्य में नयी-नयी कृतियों की रचना होती है और आधुनिक विचारों के प्रकाश में आधुनिक समाज का निर्माण भी होता है। छायावाद का मुख्य दृष्टिकोण कविताओं के माध्यम से व्यक्तिगत भावनाओं की अभिव्यक्ति, प्रकृति प्रेम, कल्पना की प्रधानता, आतंरिक सौंदर्य के प्रति विशेष आकर्षण आदि जैसे गुण होते हैं।

छायावाद के बाद हिंदी में 'हालावाद' नामक काल भी शुरू हुआ। इस समय के सबसे प्रसिद्ध लेखक और इस काल के प्रणेता हरिवंश राय बच्चन हैं। इस दौरान जो भी कविताएँ लिखी गई, उनका मुख्य विषय 'हाला' से जुड़ा हुआ होता। हाला यानि मदिरा या शराब को ही सबसे उच्च रूप में माना गया है। हिंदी में इस काल का प्रादुर्भाव भी अनुवाद रूप में ही होता है। उमर ख़ैयाम की 'रुबाइयत' का अंग्रेज़ी में अनुवाद कवि फिटजेराल्ड फिट्जेराल्ड ने किया। इनके अंग्रेज़ी अनुवाद से हिंदी में इन रुबाइयों का अनुवाद हुआ और इनसे ही 'हालावाद' की शुरुआत होती है। यह अनुवाद हरिवंश राय बच्चन ने सन् 1938 में किया। इन रुबाइयतों का अनुवाद इससे पूर्व भी हो चुका था, लेकिन बच्चन का यह अनुवाद बहुत प्रसिद्ध हुआ और पसंद किया गया।

कविता के विकास के बाद हिंदी में नाटक विधा की शुरुआत हुई। द्विवेदी युग के दौरान साहित्य में एक नयी धारा प्रवाहित हुई, जो कई रूपों में भारतेंदु युग के सापेक्ष बहुत भिन्न होती है। भारतेंदु युग के दौरान जो बातें दबी आवाज में रखी जाती थीं वो द्विवेदी युग के दौरान मुख्य और केंद्रीय

विषय बनी। जिस अंग्रेज़ी शासन का विद्रोह भारतेंदु युग में खुले तौर पर नहीं हो पाया था वह द्विवेदी युग में पूर्ण रूप में प्रकट हुआ।

अंग्रेज़ी के नाटकों के अनुवादों के माध्यम से हिंदी में दुखांत कथानक आधारित नाटक लेखन की परंपरा का विकास हुआ। इसके विकास में शेक्सपियर के नाटकों के अनुवाद महत्वपूर्ण रूप में अपनी भूमिका निभाते हैं, जिसमें इनका नाटक 'रोमियो एँड जूलियट' सबसे अधिक प्रसिद्ध हुआ। इसी नाटक के हिंदी अनुवाद से दुखांत कथानक आधारित नाटक लेखन की परंपरा विकसित हुई। नाटकों के अलावा उपन्यास लेखन में भी इसका प्रयोग हुआ। यह प्रयोग काफ़ी सफल रहा और ऐसी कृतियों को पाठकों ने पसंद किया।

हिंदी में उपन्यास विधा की शुरुआत भी अंग्रेज़ी से व बांग्ला से होती है। बांग्ला भाषा में उपन्यास लेखन विकास अंग्रेज़ी से ही हुआ। हिंदी उपन्यास के विकास क्रम में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने उपन्यास विधा की शुरुआत भारतेंदु के उपन्यास से मानते हैं। इसके बारे में डॉ० रमण सिन्हा ने लिखा है कि, "हिंदी में आधुनिक ढंग के उपन्यास का आरंभ हजारी प्रसाद द्विवेदी ने भारतेंदु के 'पूर्ण प्रकाश और चंद्रप्रभा' से माना है, जो स्पष्टतः किसी मराठी उपन्यास का अनुवाद या छायानुवाद है।"5 इसके बाद हिंदी में बांग्ला और अंग्रेज़ी दोनों ही भाषाओं की कृतियों के अनुवाद से उपन्यास विधा का विकास हुआ। इसके अतिरिक्त संस्कृत साहित्य से कई आख्यानों को कथानक रूप में लेते हुए भी हिंदी में उपन्यास लेखन हुआ। हिंदी साहित्य में उपन्यास विधा के विकास में सर्वाधिक प्रभाव रेनाल्ड्स के उपन्यासों के हिंदी अनुवाद का पड़ा। इनके उपन्यासों के बारे में रमण सिन्हा ने लिखा है कि- हिंदी में रेनाल्ड्स के रहस्य रोमांच से भरपूर मनोरंजक उपन्यासों को अनूदित किया गया.... उन्नीसवीं शताब्दी के अंतिम कुछ दशकों में रेनाल्ड्स ने अद्भुत लोकप्रियता अर्जित की थी। प्रेमचंद जैसे 'यथार्थवादी' लेखक भी रेनाल्ड्स के 'लंदन रहस्य' के उत्साही पाठक रहें हैं।"6 इनके ही अनुवादों से प्रभावित होकर हिंदी में रहस्य पूर्ण घटनाओं के कथानक आधारित उपन्यासों के लेखन हुए। इन अनुवादों ने हिंदी में अनुवाद विधा को बहुत ही मजबूती प्रदान की। इनके अनुवादों की एक लंबी परंपरा हिंदी में बनी रही। इनके उपन्यास ' मिस्टरिज ऑफ लंदन', 'द सीमेस्ट्रेस', 'फाउस्ट' आदि बहुत प्रसिद्ध रहें हैं और इनके हिंदी अनुवाद भी बहुत चर्चित हुए। इन उपन्यासों का तत्कालीन दौर में लगभग सभी भारतीय भाषाओं में अनुवाद हुआ। हिंदी साहित्य में भारतेंदु युग में ही जासुसी और तिलस्मी प्रधान शैली में उपन्यासों का लेखन शुरू हो गया था, लेकिन जिस रूप में इन उपन्यासों को प्रसिद्धि मिली वह शुरुआत द्विवेदी युग में हुआ। उपन्यास लेखन की यह परंपरा अंग्रेज़ी साहित्य के प्रभाव से ही विकसित हुई। इस क्षेत्र में दो लेखकों का नाम बहुत प्रसिद्द है, देवकीनंदन खत्री व गोपालराम गहमरी। इन लेखकों ने अंग्रेज़ी भाषा के प्रसिद्ध लेखन आर्थर कानल डायल के प्रभाव स्वरूप इनके अंग्रेज़ी उपन्यासों का अनुकरण करते हुए हिंदी में जासूसी व तिलस्मी कथानक प्रधान उपन्यास लेखन शुरू किया। इस प्रकार इन लेखकों ने अनुवाद रूप में ही हिंदी साहित्य में एक नई परंपरा का विकास किया, जो अनुवाद के माध्यम से विकसित हुई।

कहानी विधा की शुरुआत भी अंग्रेज़ी साहित्य के 'शॉर्ट स्टोरी' लेखन की प्रक्रिया से ही विकसित होती है। यद्यपि हिंदी में कहानी का अस्तित्व मौखिक रूप में बहुत पहले से मौजूद था, लेकिन लिखित रूप में इसकी शुरुआत शेक्सपियर के नाटक 'टेम्पेस्ट' का अनुवाद हिंदी में 'इंदुमति' के अनुवाद से हुई, जिसे हिंदी में अनुवाद न स्वीकार कर पहले मौलिक कहानी के रूप में स्थापित किया गया था। बाद में इसे अनुवाद रूप में स्वीकार किया गया। इस प्रकार हिंदी में अनुवाद की भूमिका बहुत ही महत्वपूर्ण हैं। इसके माध्यम से हिंदी में साहित्य की कई नई विधाओं की शुरुआत होती है।

हिंदी में निबंध विधा और आलोचना विधा इन दोनों ही विधाओं की शुरुआत भी प्रारंभिक रूप से अनुवाद के ही माध्यम से हुई। यद्यपि इन दोनों ही विधाओं को मौलिक और आधुनिक विधा स्वीकार किया जाता है। इन पर अनुवाद का कोई प्रभाव पड़ा है इस तथ्य को स्वीकार ही नहीं किया जाता। इन विधाओं की शुरुआत के बारे में रमण सिन्हा ने लिखा है कि- "खड़ी बोली हिंदी में निबंध विधा को रास्ता दिखाने वाले जो दो ग्रंथ

माने जाते हैं: 'निबंधमालादर्श' (1899) और 'बेकन-विचार-रत्नावली' (1900) वे दोनों ही अनूदित ग्रंथ हैं। 'निबंधमालादर्श' विष्णु कृष्ण चिपलूणकर (1850-82) के मराठी निबंधों का गंगा प्रसाद अग्निहोत्री द्वारा अनूदित ग्रंथ है और 'बेकन-विचार-रत्नावली' में महावीर प्रसाद द्विवेदी ने फ्रांसिस बेकन (1561-1626) के अंग्रेज़ी निबंधों का खड़ी बोली में अनुवाद प्रस्तुत किया है। लाला सीताराम (1861-1937) के अनूदित नाटकों की आलोचना पर केंद्रित महावीर प्रसाद द्विवेदी की पुस्तक 'हिंदी कालिदास की आलोचना' हिंदी आलोचना की पहली किताब है और प्रकटतः जो अनुवाद की समालोचना की किताब है।"7 इस रूप में हिंदी नवजागरण के दौरान हिंदी साहित्य में नई विधाओं के विकास रूप में अनुवाद की भूमिका बहुत ही महत्वपूर्ण रूप में रही। इसके लिए संस्कृत से, बांग्ला से व अंग्रेज़ी से अनुवाद हुए। लेकिन यह स्वीकार किया जाना चाहिए कि हिंदी में नई विधाओं के विकास के रूप में पाश्चात्य साहित्य का भी योगदान रहा है। हिंदी की शुरुआती सभी विधाओं का विकास अनुवाद के ही माध्यम से हुआ।

संदर्भ

1. अनुवाद और रचना का उत्तर-जीवन, डॉ॰ रमण सिन्हा, पृष्ठ संख्या-33
2. Goldsmith wrote his romantic balled of precisely 160 lines in 1765. The hero and heroine are Edwin, a youth without wealth or power, and Angelina, the daughter of a lord "beside of Tyne", Angelina spurns many wooers, but refuse to make plan love for young Edwin. "Quite dejected with my scorn" Edwin disappears and becomes a hermit. One day, Angelina turns up of his cell in boy's clothes and, not recognizing him, tells him her story. Edwin then reveals his true identity, and the lovers never part gain. www.hermitary.com/literature/goldsmith.html
3. The poem begins in a churchyard with narrators who are describing his surrounding in vivid details. The narrator emphasis both aural and visual sensations as he examines the area in relation to himself. After it he focuses less on the countryside and more on his immediate surroundings. His descriptions begin to move from sensation to his own thoughts about dead. He contrasts an obscure country life with a life that is remembered. He focuses on the inequities that come from death. He begins to deal with death in a direct manner as he discusses how humans desire to be remembered. The poem concludes with a description of the poet's grave. In the end the port was separated from the other common people because he was unable to join with the common affairs of life, and circumstance kept him from becoming something grater. www.gray.com/literature/gray.html
4. हिंदी साहित्य का इतिहास, विजयेंद्र स्नातक, पृष्ठ संख्या- 251.
5. अनुवाद और रचना का उत्तरजीवन, डॉ॰ रमण सिन्हा, पृष्ठ संख्या-33
6. अनुवाद और रचना का उत्तरजीवन, डॉ॰ रमण सिन्हा, पृष्ठ संख्या- 50
7. अनुवाद और रचना का उत्तर-जीवन, डॉ॰ रमण सिन्हा, पृष्ठ संख्या- 34

नागराज मंजुले : लेखक, अभिनेता, निर्देशक

व्यक्तित्व

नागराज पोपटराव मंजुले राष्ट्रीय पुरस्कार प्राप्त फ़िल्मकार हैं, जो अपनी पहली लघु फ़िल्म 'पिस्तुल्या' के लिए जाने जाते हैं। नागराज मंजुले का बाल्य-काल और पालन-पोषण महाराष्ट्र के सोलापुर जिले के जेउर में हुआ।

इन्होंने पुणे विश्वविद्यालय से मराठी साहित्य में एमए किया। इसके न्यू आर्ट्स एंड साइंस कॉलेज, अहमदनगर से जनसंचार अध्ययन में स्नातकोत्तर किया। इनकी राष्ट्रीय पुरस्कार प्राप्त लघु फ़िल्म 'पिस्तुल्या' इनके आप-बीती अनुभवों की प्रतिबिंब है। इसके बाद 2014 में इन्होंने अपनी पहली फ़ीचर फ़िल्म 'फंड्री' से पदार्पण किया। कैकड़ी भाषा में फंड्री का मतलब है- सुअर। नागराज मंजुले अपनी पुस्तक 'उन्हाच्या कटाविरुद्ध' के लिए भी जाने जाते हैं। इस समाज में पलते-बढ़ते उन्होंने बहुत कुछ सहा है और इसका असर उनकी फ़िल्म और कविताओं में साफ-साफ झलकता है। इनकी फ़िल्म को FIPRESCI INDIA of International Federation of Film Critics – India Chapter द्वारा पुरस्कार प्राप्त हो चुका है और पुणे अंतरराष्ट्रीय फ़िल्म फेस्टिवल में बेस्ट डायरेक्टर के रूप में सम्मानित किए गए हैं। इसके अलावा अपनी फ़िल्मों के लिए अन्य कई पुरस्कारों से सम्मानित किए जा चुके हैं।

नागराज मंजुले : लेखक, अभिनेता, निर्देशक

जन्म: 24 अगस्त 1977

निवास: जेउर, सोलापुर कर्माला तालुका

फ़िल्मोग्राफी

- •पिस्तुल्या(2009)-(निर्देशक)
- •फंड्री(2013)-(निर्देशक)
- •हाईवे(2015)-(अभिनेता)
- •साइलेंस(2015)-(अभिनेता)
- •बाजी(2015)-(अभिनेता)
- •सैराट(2016)-(निर्देशक)

नागराज मंजुले

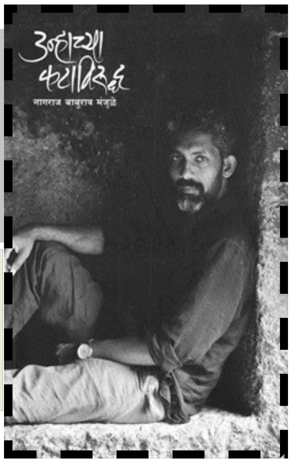

कविता संग्रह

नागराज मंजुले का कविता संग्रह 'उन्हाच्या कटाविरुद्ध' पुरस्कार प्राप्त और काफ़ी पसंद की गई किताब है।

भीष्म साहनी

व्यक्तित्व

भीष्म साहनी हिंदी साहित्य से जुड़ा ऐसा नाम है जिससे बिरले ही अपरिचित होंगे. भीष्म साहनी प्रख्यात फ़िल्म अभिनेता बलराज साहनी के छोटे भाई थे. अपने बड़े भाई की तरह भीष्म साहनी भी इप्टा से जुड़े थे और कई नाटकों में अभिनय और निर्देशन किया, लेकिन इनका मुख्य रचना कर्म था कथा साहित्य की रचना . इस क्रम में उन्होंने कई कहानियाँ, उपन्यास और नाटकों की भी रचना की.

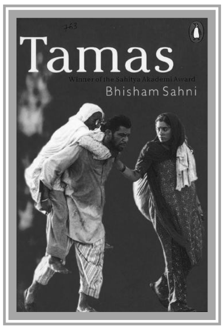

साहनी जी की सबसे ज़्यादा ख्याति प्राप्त रचना 1973 में प्रकाशित और साहित्य अकादमी पुरस्कार प्राप्त ‘तमस’ है. गोविंद निहलानी ने साहनी जी की इसी रचना पर पांच घंटे की टेली फ़िल्म का निर्माण किया, जिसका प्रसारण 1986 में दूरदर्शन पर चार एपिसोड्स में हुआ था.

फ़िल्मों अभिनेता के रूप में भीष्म साहनी जी का आगमन 1984 में सईद अख्तर मिर्जा की फ़िल्म ‘मोहन जोशी हाजिर हो’ में मोहन जोशी की मुख्य भूमिका के साथ हुआ. उस वक्त उनकी उम्र 69 वर्ष थी. इसके बाद उन्होंने कुछ और फ़िल्मों व धारावाहिकों में काम किया . ‘बहादुरशाह ज़फर’और ‘राजधानी’ प्रमुख धारावाहिक हैं.

भीष्म साहनी

(1915-2003)

जन्म शताब्दी वर्ष पर विशेष

‘तमस’, ‘लिटिल बुद्धा’ और ‘मिस्टर एंड मिसेज अय्यर’ उल्लेखनीय फ़िल्में हैं, जिनमें से ‘लिटिल बुद्धा’ अंतरराष्ट्रीय ख्याति प्राप्त फ़िल्मकार बर्नार्डो बुर्तोलुच्ची की फ़िल्म थी, तो ‘मिस्टर एंड मिसेज अय्यर’ अपर्णा सेन की फ़िल्म थी. ‘मिस्टर एंड मिसेज अय्यर’ भीष्म साहनी की आख़िरी फ़िल्म थी. इस फ़िल्म के वक्त उनकी उम्र 87 वर्ष थी.

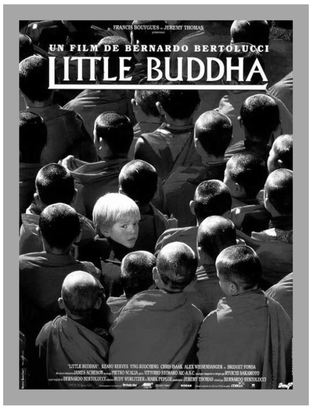

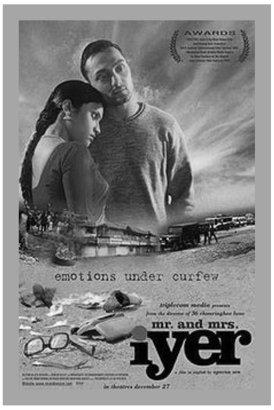

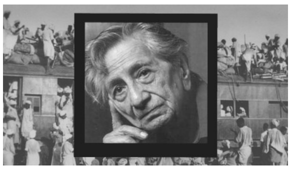

भीष्म साहनी

भीष्म साहनी एक लेखक के अलावा एक अभिनेता, पटकथा लेखक के रूप में भी याद किए जाएंगे. हमेशा सांप्रदायिकता का विरोध करने वाले भीष्म साहनी को उनके जन्म शताब्दी वर्ष में हमारा भावपूर्ण नमन्...

 ISSN 2455-0310

Review of English-Hindi Phrasal Dictionary

समीक्षा

English-Hindi Phrasal Dictionary

Krishna Kumar Goswami

Year of Publication: 2015

Publisher: Rajkamal Publishers, New Delhi

Cost: INR 1500

The origin of bilingual dictionary (English to Hindi or vice-versa) was started in India, in the 17th century. Since then, several dictionaries that present definitional vocabulary were formed. But whatsoever phrasal dictionaries were available they were presented only in single language, mostly in English. The available phrasal dictionaries other than in English language contain only meanings of some expressions. That is why none of them hold any flagship among reputed dictionaries. Since then till today, nobody has generated any insight for a well equipped bilingual English-Hindi phrasal dictionary.

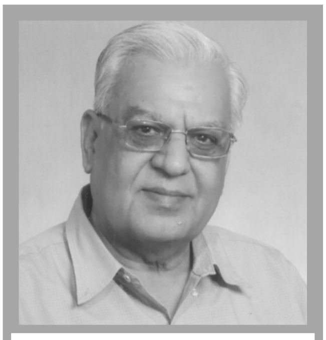

Krishna Kumar Goswami

Prof. Krishna Kumar Goswami, a distinguished academician, a renowned linguist, a translator, a critic and an analyst has endeavoured to create the first significant Bilingual Phrasal Dictionary that establishes a landmark among all the bilingual dictionaries. The English-Hindi Phrasal Dictionary by Prof. Goswami is a pioneer work in the field of lexicography because it attempts to overcome the deficiency of the existing bilingual Hindi-English dictionaries.

The English-Hindi Phrasal Dictionary is a new dictionary in its own type. It compiles a collection of phrases. A phrase is a group of words without a subject and a finite form of verb. When a verb takes a preposition or any adverbial form, it is called a Verb Phrase or a Phrasal Verb. The idiomatic phrase including compound verb expresses a special or idiomatic meaning beyond its literal meaning. The English-Hindi Phrasal Dictionary is a creation

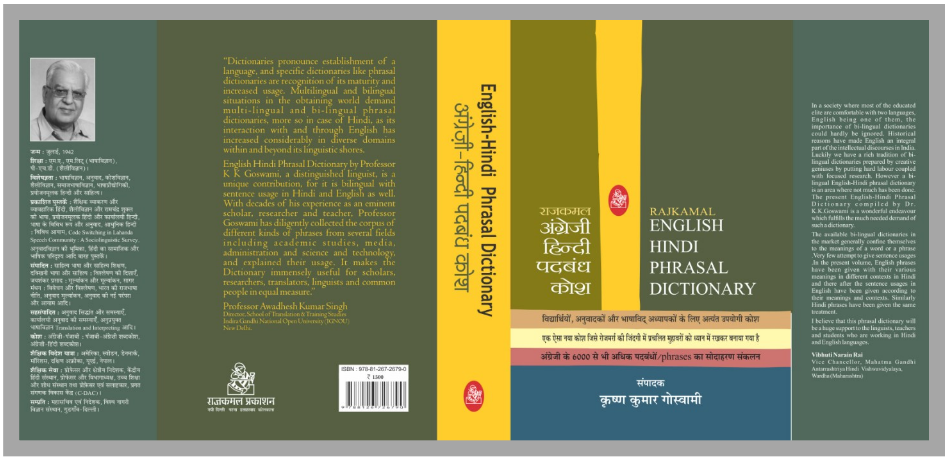

Mrs. Shalini Mishra
Research Scholar
Linguistics Department
University of Lucknow
Lucknow, U.P.

that is enriched with around ten thousand English phrasal verbs along with all possible meanings (in Hindi) that are far different from their literal sense. Further, in accordance to their context, sentence for each expression have been given in Hindi as well as in English. This enables the readers to generate clear knowledge about all the possible meanings and their usages as well.

In Indian atmosphere, where almost the whole population is bilingual or multilingual, the importance of a bilingual dictionary especially the phrasal one is enormous. Realizing the eminent role and extensive usage of English since centuries among the varied Indian language communities in India; and the importance of Hindi, the national language which is widely used at various registers by majority of Indian population, Prof. Goswami undertook the gigantic task to compile such a work of language that may help in making the communication aesthetic. Another specific quality of the dictionary is that the phrases analyzed in it are collected from various authentic sources like journals, newspapers, magazines, textbooks, academic books, dictionaries etc. The present work of Prof. Goswami bangs in the history of dictionary.

The significance and role of the phrasal dictionary is very well estimated. It is of utmost importance for every professional who is anyhow related to India. In the present era of globalization English and Hindi have been used extensively, not only in India but all around the globe. So, to meet out the several requirements of globalization, help has to be traced out from dictionaries, especially the phrasal dictionaries. Other than this, due to globalization, origin and development of various subjects and branches have also been taking place. While going through these subjects, many a times one may come across such words, phrases, clauses, expressions and idiomatic usages that are difficult to decode. At all such situations, phrasal dictionaries play vital roles.

This dictionary is useful not only for the teachers and students of schools, colleges, various academic institutes and universities but also for professionals from the field of mass communication and journalism. Other than this, it is also very practical and useful for the specialists, officers, Hindi officers, translators who work in the field of administration, banking, commerce, management etc. It will be a proven asset for every school, colleges, institutes, universities, banks and other business organizations. Actually, it can play a very significant role in the form of a reference book in libraries and book banks of various universities and institutes of higher education. This phrasal dictionary has its own sovereignty in which contextual sentence usage of various meanings and expressions have their own explicit importance.

Prof. Goswami's creation is valuable for academicians, professionals and for all who want to learn English language in a correct and complete manner because idiomatic and proverbial usages are always specific to the native country of the concerned language. This shall provide a great help to all of them who want to polish and adorn their knowledge of English and want to speak effectively as well as beautifully.

मिथ तोड़ती सैराट

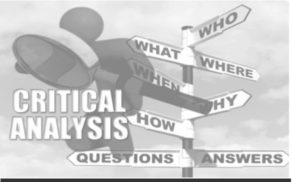

समीक्षा

मराठी फ़िल्म सैराट प्रसिद्ध संचारविद मार्शल मैकलुहान के सिद्धांत 'माध्यम ही संदेश है' की याद दिलाती है। इस सिद्धांत के अनुसार, कई माध्यम ऐसे होते हैं, जो अपने आप में संदेश बन जाते हैं। कई मायनों में सैराट फ़िल्म भी कुछ ऐसी ही है। कहने को तो फ़िल्म मराठी में बनी है, मगर फ़िल्म भाषा के बंधनों से परे है। फ़िल्म देखने के बाद गैर-मराठी भाषी दर्शक भी संवेदना के उसी स्तर पर पहुंचता है, जितने पर कोई मराठी जानने वाला। एक बॉलीवुड फ़िल्म देखने के बाद दर्शक थिएटर छोड़ने के साथ ही सब कुछ भूल चुका होता है। लेकिन निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि सैराट उन फ़िल्मों में से नहीं है। थियेटर से निकलने के बाद हर दर्शक मन में सवाल होते हैं। ये सवाल बहुत देर तक मन को कचोटते हैं। वास्तव में सैराट हमारे समाज के बौद्धिक पाखंड पर एक जोरदार तमाचा है। यह सिर्फ सामाजिक आडंबरों सवाल ही नहीं करती, बल्कि समाज में पसरी गहरी चुप्पी को तोड़ने के लिए प्रेरित भी करती है।

सैराट हमारे समाज के बौद्धिक पाखंड पर एक जोरदार तमाचा है। यह सिर्फ सामाजिक आडंबरों सवाल ही नहीं करती, बल्कि समाज में पसरी गहरी चुप्पी को तोड़ने के लिए प्रेरित भी करती है।

निर्देशक नागराज मंजुले ने प्रेम के बहाने भारतीय समाज, राजनीति और संस्कृति के आडंबरों को दिखाने की कोशिश की है। कई मायनों में यह फ़िल्म नागराज की पहली फ़िल्म 'फंड्री' का अगला पड़ाव लगती है। 'फंड्री' में दलित समाज का लड़का 'जब्या', अपने साथ पढ़ने वाली ऊँची जाति की लड़की को बहुत पसंद करता है। उसे अपनी ओर आकर्षित करने के लिए वह उसके सामने अच्छे कपड़ों में आना चाहता है और अपनी पारिवारिक पृष्ठभूमि उससे छुपाता है। पर अंत तक लड़की को उसके प्यार की भनक तक नहीं लगती। अंत में लड़की बस यही जान पाती है कि यह एक नीची जाति का लड़का है, जो उसके साथ पढ़ता है। पर सैराट में 'फंड्री' का 'जब्या' प्रशांत/परश्या हो जाता है। वह 'जब्या' की तरह नहीं है। परश्या के बहाने नागराज यह दिखाने की कोशिश करते हैं कि जमाना पहले से काफ़ी बदल गया है। इस बदलाव ने ही परश्या को गाँव का हीरो बना दिया है। परश्या साफ-सुथरा कपड़े पहनता है। वह और उसके दोस्त पाटिल की बावड़ी में नहाते हैं और वो पाटिल की लड़की को और पाटिल की लड़की उसे कनखियों से देखती है। परश्या सिर्फ पढ़ाई में ही नहीं खेल के मैदान में भी हीरो है। पाटील की बेटी आर्ची भी परश्या के नायकत्व की वजह से ही उससे प्यार करती है। 'फंड्री' के 'जब्या' की तरह परश्या आर्ची से कुछ नहीं छुपाता। उसके मन में अपनी जाति को लेकर कोई शर्मिंदगी नहीं है। आर्ची को यह पता है कि नायक नीची जाति का है, बावजूद इसके वह न सिर्फ परश्या के घर जाती है, बल्कि उसके यहां पानी भी पीती है और उसके माँ के पैर भी छूती है। दरअसल ये दृश्य भारतीय समाज में हो रहे आरंभिक बदलाओं को दिखाते हैं। इस बहाने मंजुले युवाओं के मन को टटोलने की कोशिश करते हैं। उन्हें लगता है कि 21 वीं सदी का युवा जाति व्यवस्था से ऊपर उठ चुका है। पर यह भ्रम जल्दी ही टूट जाता है। आर्ची का भाई प्रिंस का दलित मराठी कवि नामदेव ढसाल का पाठ पढ़ाने वाले शिक्षक को भरी कक्षा में थप्पड़ मारना और दलित शिक्षक की लचारगी बहुत जल्दी ही यह भ्रम तोड़ देती है कि समाज में सब कुछ बदल गया। इस बात का अहसास तो तब भी होता, है जब परश्या पर्दे पर बार-बार पीटते हुए दिखता है। दूसरी फ़िल्मों की तरह यहां हीरो का हिरोइज़्म फ़िल्म के अंत तक नहीं चलता, इंटरवल से पहले ही खत्म हो जाता है।

रुद्रभानु प्रताप सिंह
रूपाली अलोने

इंटरवल से पहले मंजुले दर्शकों को कस्बे और गाँव का प्यार दिखाते हैं। एक ऐसा प्यार दोस्ती है, रोमांटिक गाने हैं, लहलहाते खेत हैं, चहचाहती चिड़ियों का झुंड है और पानी से लबालब भरी बावड़ी है। ट्रैक्टर, बुलेट और

घोड़ा चलाती हुई आर्ची है और प्रेम की कविता पढ़ता परश्या है। सब कुछ अच्छा है। हर दृश्य मनमोहक है। पर जैसे-जैसे कहानी आगे बढ़ती है, इस मनमोहक दृश्य की कुरूप सच्चाई सामने आने लगती है। आर्ची और परश्या प्यार किसी को बर्दाश्त नहीं। इस जोड़े को जमींदार परिवार की हिंसा का सामना करना पड़ता है और यह बात साफ हो जाती है कि आज भी भारतीय समाज में एक लड़की तभी तक घुड़सवारी, बुलेट और ट्रैक्टर चला सकती है, जब तक वह अपने पिता के ताक़तवर संसार के भीतर है। एक दलित लड़के का हाथ थामते उसकी सारी सुविधाएं छीन ली जाती हैं। उन्हें समाज से बेदखल कर दिया जाता है। जान बचाने के लिए वे दूसरे शहर भागते हैं और यथार्थ की धरातल पर उन्हें एक स्लम में आकर रहना पड़ता है। एक वक्त पर यह प्रेम पश्चाताप का रूप भी लेती है। आर्थिक चिंताएँ और पुरुषत्व परश्या को मर्द बना देते हैं। पर शक और पश्चाताप के कुछ व्यथित करने वाले दृश्यों के बाद प्रेम फिर से एक संभावना बनकर उभरती है। जीवन की गाड़ी पटरी पर दौड़ने लगती है। परिवार में एक बच्चा भी आ जाता और दोनों छोटे क्वाटर से निकलकर फ्लैट का सपना देखने लगते हैं। लगता है कि 'हैप्पी इंडिंग' होने वाली है कि अचानक आर्ची और परश्या का बच्चा खून से सने पैरों से बाहर निकलता है। फर्श पर उसके खून सने पैरों के निशान छूटते जाते हैं और सैराट एक लहूलुहान भविष्य की ओर इशारा करते हुए खत्म हो जाती है। पर अपने पीछे कई सवाल छोड़ जाती है।

निर्देशन के मामले में नागराज ने फ़िल्म की डिटेलिंग पर बहुत ध्यान दिया है। कहीं से भी फ़िल्म बनावटी नहीं लगती। किरदारों का पहनावा और गाँव वास्तविक लोकेशन फ़िल्म को और जीवंत बनाते हैं। फ़िल्म की स्क्रिप्ट इतनी कसी हुई है कि लंबी होने बावजूद बोर नहीं करती। समाज के लिए ही नहीं पूरी फ़िल्म इंडस्ट्री के लिए भी सैराट एक उम्मीद की तरह है। इसके बहाने नागराज ने सिनेमाई दुनिया के कई मिथ तोड़ दिए हैं।

Disambiguating Verb Sense: A Rule-based Approach for Machine Translation

(Special reference with English motion around the axis verbs)

शोध

Natural Language Processing (NLP) is an area of research and application that explores how computers can be used to understand and manipulate natural language text or speech to do useful things. Machine Translation (MT) is among one of the first applications of computers. Since 1950, there have been several efforts in this field leading to the development of several products and tools for language analysis. With the emergence of internet, enormous amount of corpora is being available which has boosted the research in Statistical techniques in the field of Natural Language Processing (NLP).

Here, we are trying to think through the perspective of the rule based approach of machine translation for the sense disambiguation of English verbs as far as English-Hindi machine translation is concerned.

In natural language processing the most crucial task is how to analyze the exact meaning of a word in the sentence. Word may be polysemous in principle, but in actual text there is very little real ambiguity- to a person. Lexical (word) disambiguation in its broadest definition is nothing less than determining the meaning of every word in context, which appears to be a largely unconscious process in people. As a computational problem it is often described as "AI-complete", that is, a problem whose solution pre-supposes a solution to complete natural-language understanding or common-sense reasoning. (Ide and Veronis 1998)

In the field of computational linguistics, the problem is generally called word sense disambiguation (WSD), and is defined as the problem of computationally determining which "sense" of a word is activated by the use of the word in a particular context (Eneko Agirre and Philip Edmonds, 2006). Here, the chief concern of this paper is how we can analyze the verb meaning specially the meaning of motion verb in English language for English-Hindi machine translation. Research in the lexical semantics of verbs is dominated by studies in the syntax-semantics interface, a major concern in current syntactic theory. The central issue in the interface between verb senses and syntax is the linking or syntactic projection of the semantic arguments of a verb, which in many approaches are classified into broad types of event participant, called thematic roles, thematic relations, or participant roles. Thematic roles (or the information they encode) are components of verb meaning. Theories of thematic roles are developed to account for regularities in the syntactic realization of arguments. For, example, with a verb that denotes an action done by one entity to another (Jones folded the letter, Jones ate the pie, Jones stroked the cat), the entity active voice sentence is expressed as (linked to, projected as) the subject of an active voice sentence, and the entity the action is done to is expressed as the direct object. (Kearns Kate: 566-567) All these studies are helpful in understanding the lexical relations for word sense disambiguation.

Sudhir Jinde
Ph.D. Research Scholar
Email:
stransa@gmail.com

Here, we are trying to think through the perspective of the rule based approach of machine translation for the sense disambiguation of English verbs as far as English-Hindi machine translation is concerned. Deciding verb meaning is a fruitful problem for the researcher in linguistics and computational linguistics.

Lexical aspect and grammatical aspect are inherently verbal categories. Their primary locus of expression is the verb and they are mainly designed for operating on the domain of eventualities, the domain from which verbs, verb phrases and sentences take their denotations. Nevertheless, the semantic notions used for their characterization (i.e., partitivity and totality here) can be also encoded by noun phrases or prepositional phrases, which take their denotations from the domain of individuals. Vice versa, verbs marked for grammatical aspect can have effects on the interpretation of noun phrases. One of the main claims pursued here is that such interactions are semantically motivated: it is the nominal argument, direct or oblique, linked to the Incremental Theme role that interacts with the aspectual semantics of verbs, verb phrases and sentences, at least in the most straightforward cases. (Filip Hana, 2000:02)

Word meaning is in principle infinitely variable and context sensitive. It does not divide up easily into distinct sub-meanings or senses. Polysemy means to have multiple meanings. It is an intrinsic property of words (in isolation from text), whereas "ambiguity" is a property of text. Whenever there is uncertainty as to the meaning that a speaker or writer intends, there is ambiguity. So, polysemy indicates only potential ambiguity, and context works to remove ambiguity. (Agirre Eneko and Philip Edmonds, 2006: 08)

The meaning of these verbs includes a specification of the direction of motion, even in the absence of an overt directional complement. For some verbs this specification is in deictic terms; for other it is in nondeictic terms. None of these verbs specify the manner of motion. However, the members of this class do not behave uniformly in all respects. They differ as to how they can express the goal, source, or path of motion, depending on the verb, these may be expressed via a prepositional phrase, as a direct object, or both. (Levin, 1993:264)

These verbs relate to manners of motion that are characteristic of inanimate entities (i.e., where there is not necessarily protagonist control on the part of the moving entity). In the absence of a prepositional phrase specifying direction, none of these verbs indicates the direction of motion. Many of the roll verbs that describe motion around an axis take a rather restricted range of prepositions heading the prepositional phrase that describes the path of motion. (Levin,1993)

Many theories have been built on the assumption that the syntactic realization of arguments is largely predictable from the meaning of verbs. The fact that verbs with similar meanings show characteristic argument realization patterns suggests that these patterns can be attributed to the semantic properties of each class. The main goal of theories concerned with the close relation between syntax and semantics is to identify the relevant components of meaning as well as to explicate their connection to the range of argument realization options (Levin & Rappaport Hovav, 2005:3). In the present research article, these theories or approaches are grouped under the syntax-semantics interface.

Motion verbs are a problematic verb class for research on the relation between syntax and semantics since they do not seem to behave syntactically as a coherent semantic class. Across languages, it is observed that syntactic subjects of some motion verbs share some properties with the direct objects of transitive verbs (i.e., they acts as Patients or Themes), whereas subjects of other motion verbs acts as Agents (Ferez Paula C., 2008:95). In roll verbs as given by Levin, this verb class specifies manners of motion characteristics of inanimate entities, that is, the Figure does not necessarily controls its motion. In the absence of a prepositional phrase, none of these verbs indicates the path of motion. Levin noted that many of the roll verbs that describe motion around an axis take a rather restricted range of prepositions heading the prepositional phrase that describes the path of motion,

For example,

The ball rolled down the hill.

The ball rolled over the hill

The ball rolled into the gutter.

For the process of disambiguation, this kind of linguistic-semantic information is very useful for

developing rules for generating desired meaning through natural language processing. When prepositions comes with the motion verb being a phrasal verb the meaning gets restricted. But such restricted meaning comes in the context of different noun phrase in the predicate there happens a change in the meaning of the verb in that context. So, for disambiguating such verbs two level rule has to be developed so that contextual meaning could be attached with the verb meaning. Motion verbs when takes a preposition, its path gets defined but to understand the meaning of the verb in the given context, the co-relation between its noun phrases in the predicate must be understood so that disambiguation will be possible.

References:

1. Eneko Agirre and Philip Edmonds, 2006 „Word Sense Disambiguation‟ Springer Publication.

2. Hardev Bahari, 1985 „Hindi Semantics‟, Lokabharati Publication, Allahabad, New Edition.

3. Ide, Nancy & Jean Veronis, 1998, „Word Sense Disambiguation: the state of the art.‟ *Computational linguistics*, 24(1)

4. John Lyons, 2005 "Linguistics Semantics: An Introduction", Cambridge University Press.

5. Kearns Kate, "Lexical Semantics, Handbook of English Semantics", Edited by Aarts and April McMahon, Wiley-Blackwell Publication

6. Levin.B. & Rappaport Hovav, M., 2005, 'Argument Realization', Cambridge: Cambridge University Press.

7. Levin.B. , 1993, 'English Verb Classes and Alternations: A preliminary investigation. Chicago: The University of Chicago Press.

तुलिका

CREATION

सृजन

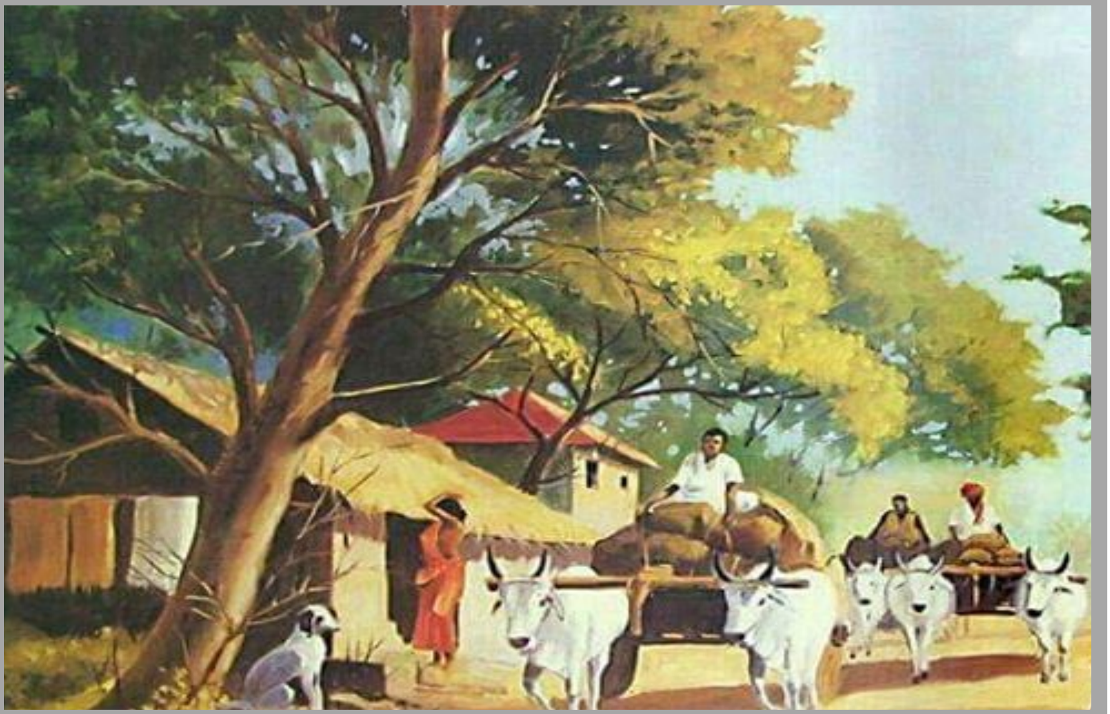

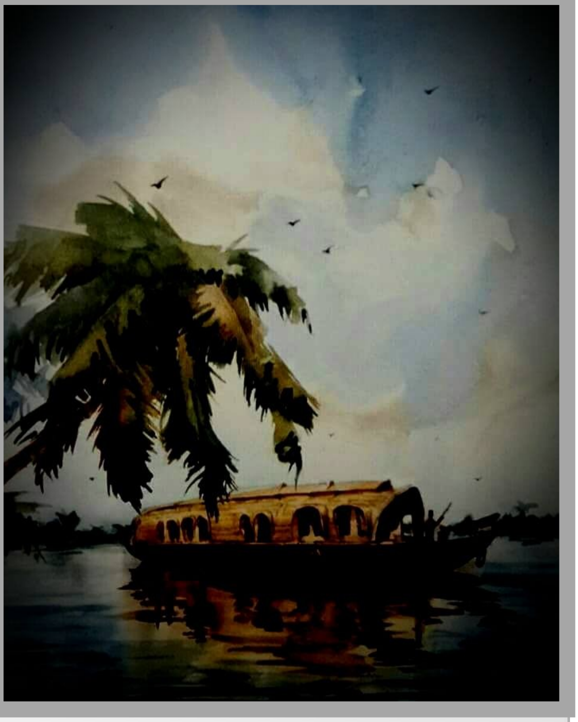

VISHAL SORTEY

MAHARASHTRA

 ISSN 2455-0310

कैमरा

CREATION

सृजन

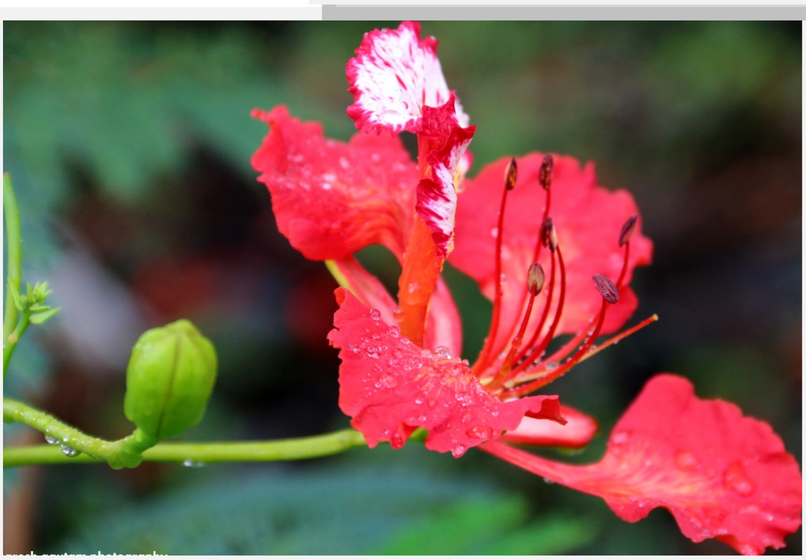

NARESH GAUTAM
MAHARASHTRA

लेखनी

CREATION

सृजन

एक कविता लिखनी है...

आप बुद्धिजीवियों से कुछ शब्द उधार चाहिए थे...

लिखना है आपकी नज़रों और शब्दों के बीच की विसंगतियों को....

लिखना है कि कैसे अपनी कविताओं में
शब्दों के खूबसूरत महीन पर्दे के पीछे आप लूटते है मेरी अस्मत
और श्रोता कैसे बन जाते हैं तमाशबीन

यह भी लिखना है
कि अपने चित्रों में किस प्रकार खींच लेते हैं आप मेरे मांसल अंगों से आँचल
जिसे तथाकथित कलाप्रेमी सजाते हैं बड़े शौक से अपने आलीशान घर के ड्राइंग रूम में...

कुछ इस बारे में भी लिखना है कि
कैसे आप अखबारों और न्यूज़ चैनलों पर सजाते हैं मेरे बलात्कार की खबरों को
कितनी खूबसूरती से फ़िल्माते है मेरे बलात्कार, प्रेमप्रसंग, छेड़खानी और सुहागरात के सीन

सबसे जरूरी
आप तथाकथित प्रगतिशील ही कैसे बनते जा रहें है समाज के लिए खतरा
यह लिखना है

बस शहद में लिपटे कुछ शब्दों का संजाल उधार चाहिए था आपसे

MEGHA ACHARYA
MAHARASHTRA

डॉ. चंद्रप्रकाश द्विवेदी

किसी के पास अपना ठोस मत नहीं है कि फ़िल्म में 'प्रधानमंत्री मुर्दाबाद' रह सकता है या नहीं

बात-चीत

चाणक्य सीरियल के ज़रिये टीवी पर अपनी पैठ जमा चुके निर्देशक डॉ. चंद्रप्रकाश द्विवेदी बॉलीवुड में भी अपनी प्रतिभा का लोहा मनवा चुके हैं। डॉ. चंद्र प्रकाश द्विवेदी के पिछले कामकाज की बात की जाए तो वह प्राचीन भारतीय इतिहास और साथ ही सामयिक भारतीय साहित्य से गहरे तक प्रभावित रहा है चाहे फिर वो 'चाणक्य' हो, 'उपनिषद गंगा' हो, 'पिंजर' हो या फिर विवादों के घेरे में चल रही फ़िल्म 'मोहल्ला अस्सी' हो। वर्ष 2003 में नेशनल अवार्ड विजेता फ़िल्म 'पिंजर' काफ़ी चर्चा में रही, जो अमृता प्रीतम के उपन्यास 'पिंजर' पर आधारित थी। फ़िल्म भारत विभाजन के दौरान हिंदू-मुस्लिम तनाव के बीच एक दर्दनाक प्रेम कथा पर आधारित थी। महाभारत के पात्र कर्ण के जीवन पर बनी 'मृत्युंजय' ने 1996 में काफ़ी प्रसिद्धि प्राप्त की। इस धारावाहिक के लिए डॉ. द्विवेदी को स्क्रीन वीडियोकॉन बेस्ट डायरेक्टर अवार्ड से सम्मानित किया गया था। उनकी एक फ़िल्म 'जेड प्लस' उस मोहल्ले से निकली है, जिसमें 'वेलकम टू सज्जनपुर', 'सारे जहां से महंगा', 'वार छोड़ ना यार, तेरे बिन लादेन' जैसी फ़िल्में बसती हैं।

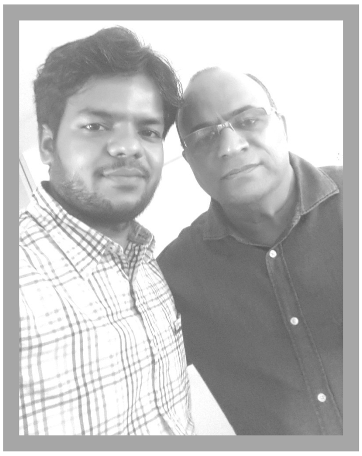

डॉ. चंद्रप्रकाश द्विवेदी भारतीय केंद्रीय फ़िल्म प्रमाणन बोर्ड के सम्मानित सदस्य भी हैं। उन्होंने पंजाबी फ़िल्म 'दस' तथा मराठी फ़िल्म 'एक तारा' को सर्टिफ़ाई करने वाले पैनल में अपनी सक्रिय भूमिका निभाई हैं। सेंसरशिप और बोर्ड की गतिविधियों को लेकर उनके ऑफिस विज़डम ट्री प्राइवेट लिमिटेड मुंबई में जब उनसे मेरी बात हुई, तो उन्होंने बिना किसी औपचारिकता मेरे सवालों के सामयिक उत्तर दिए। उनसे यह बात-चीत इसीलिए भी महत्वपूर्ण है, क्योंकि द्विवेदी जी खुद बोर्ड के सदस्य है और उनकी एक फ़िल्म 'मोहल्ला अस्सी' की सेंसर कॉपी लीक हो हमें यूट्यूब पर देखने को मिलती हैं। इस बातचीत में उनकी फ़िल्म की सच्चाई को भी जानने की कोशिश की गई हैं।

एड्वाइजरी पैनल में बैठे लोग गाइड लाइन को भूल सेंसर और प्रमाणित के अंतर को भूल गए हैं। बोर्ड के सदस्य फ़िल्म को देखते हुए उसके कंटेन्ट को काटना अपना नैतिक कर्तव्य समझने लगे हैं या समझते आए हैं, जिसे वो गलत समझता हैं।

पेश हैं उनके बातचीत के कुछ अंश

सेंसरशिप की समकालीन गतिविधियों पर आपकी की क्या राय है?

देखिए मैं सेंसरबोर्ड को सर्टिफिकेशन बोर्ड कहना ज़्यादा पसंद करता हूँ, किंतु समकालीन गतिविधियों में बोर्ड ने अपनी गाईडलाइन से इतर काम किया है। बोर्ड का पूरा नाम 'केंद्रीय फ़िल्म प्रमाणन बोर्ड' है और इसके मानदंड भी फ़िल्म को सर्टिफ़ाई करने के इर्द-गिर्द ही बनाए जाने चाहिए। वर्तमान में सेंसरशिप को लेकर जो विवाद हो रहे हैं, वो इसलिए हो रहे हैं, क्योंकि फ़िल्म को सर्टिफ़ाई करने के नाम पर जो इतने बड़े-बड़े मानक दे दिए गए है और एड्वाइजरी पैनल में बैठे लोग गाइडलाइन को भूल सेंसर और प्रमाणित के अंतर को भूल गए हैं। बोर्ड के सदस्य फ़िल्म को देखते हुए उसके कंटेन्ट को काटना अपना नैतिक कर्तव्य समझने लगे हैं या समझते आए हैं, जिसे वो गलत समझता हैं। फ़िल्म को उसके संदर्भ के आधार पर देखना चाहिए न की अपनी मान्यताओं के आधार पर। सिनेमेटोग्राफ एक्ट 1952 और मुग्दल कमेटी की रिपोर्ट 1983 दोनों को संशोधित किए जाने की सख्त आवश्यकता हैं।

मनीष कुमार जैसल
सिनेमा शोधार्थी
प्रदर्शनकारी कला विभाग
महात्मा गांधी अंतर्राष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय
वर्धा महाराष्ट्र 442001
9616730363
mjaisal2@gmail.com

फ़िल्म एक कला माध्यम है ऐसे में फ़िल्म पर सेंसर की व्यवस्था पर आप क्या कहना चाहते है?

फ़िल्म के अलावा आप देखिए कि थियेटर में भी सेंसर होता है। आपको स्क्रिप्ट सबमिट करनी होती है। जहां पर परफोरमिंग शब्द जुड़ जाता है, उसे सीधे जनता के हित-अहित के संदर्भ में देखा जा सकता है। ऐसा माना जाता है

कि आप अगर 1000-500 लोगों के बीच नाटक कर रहे है, तो राज्य कि अथोरीटी से आपको पर्मिशन लेनी पड़ती है कि कहीं किसी प्रकार कि अनहोनी न हो जाएँ। ऐसा ही किस्सा आप सिनेमा के लिए भी देख सकते है, लेकिन मैं यह भी कहन चाहता हूँ कि अब आप इंटरनेट के इस युग में अपने विचार, अपना संदेश यू ट्यूब व अन्य डिजिटल मीडिया माध्यमों में अपलोड कर दिखा सकते हैं। हो सकता है कि अगर उसमें हिंसात्मक कंटेन्ट दिखाया गया है, तो आपके ऊपर सांविधानिक कार्यवाही भी हो जाएँ। खैर आप अपनी बात को इस माध्यम से रख सकते है। हमारे यहाँ या इस प्रकार की सस्थाएं है, जो हर चीज़ को पहले देख लेना चाहती है कि क्या समाज के हित में है क्या नहीं है, मेरी नज़र में चंद मुट्ठी भर लोग इस तरह के फैसले ले इससे ज़्यादा बेहतर होगा कि लेखक निर्देशक ही तय करें कि क्या वो जो दिखाना चाह रहा है, वो समाज के हित में है या नहीं। उन फ़िल्मों को सेंसर बोर्ड सिर्फ सर्टिफ़ाई करें कि कौन सी फ़िल्म किस श्रेणी के लिए है, किस वर्ग के लिए है। अगर उसके बाद भी कोई बवाल होता है, तो कानून उस पर कड़ी कार्यवाही करें, ताकि अगली बार कोई उस तरह की फ़िल्म बनाने की हिमाकत ही न करे।

मैं छोटे से उदाहरण से अपनी बात की पुष्टि करना चाहूँगा । बैंडेट क्वीन नाम की एक फ़िल्म आई थी, जिसके निर्देशक शेखर कपूर थे। फ़िल्म आप तो जानते ही होंगे कि सेंसर बोर्ड के अलावा सामाजिक स्तर पर भी चर्चा के केंद्र में थी। उस फ़िल्म से पहली बार आपने गालियां सुनी। सच्ची घटना पर आधारित फ़िल्म, जिसमें एक स्त्री की पीड़ा अभिव्यक्त हो रही है। एक ऐसा समाज, जिसमें उसकी वही बोली भाषा है, जो फ़िल्म में दिखाई गई है। सेंसर बोर्ड से यह फ़िल्म पास नहीं हो सकी थी। बाद में त्रिब्ब्युनल ने इसे पास किया। मुझे यहाँ फ़िल्म के निर्माता निर्देशक और अभिनेत्री तीनों का धन्यवाद करना है, जिन्होंने इस फ़िल्म को बनाए के लिए इतना बड़ा साहस दिखाया, जो साहस आज भी निर्माता निर्देशक नहीं कर पा रहे हैं। उसका एक कारण सेंसर बोर्ड की हाल में चल रही गतिविधियाँ भी है। इसके अलावा एक और बड़ी समस्या है पायरेसी की, क्योंकि जितने ज़्यादा दिन फ़िल्म सेंसर बोर्ड में अटकी रहेगी, फ़िल्म को पायरेट होने का खतरा उतना ही रहता है।

फ़िल्म प्रमाणन होने की प्रक्रिया के बारे में आप कुछ कहना चाहेंगे ?

किसी फ़िल्म को प्रमाणित होने की प्रक्रिया बहुत ही आसान है पर एक बात मैं जिस ओर आपका ध्यान दिलाना चाहूँगा कि फ़िल्म के साथ आपको स्क्रिप्ट जमा करनी होती है। इसकी बोर्ड को क्या आवश्यकता होती है, जब पूरी फ़िल्म आपके पास है। मैंने अभी तक सेंसर बोर्ड सदस्य रहते हुए जो फ़िल्में देखी उनकी स्क्रिप्ट कभी खोल कर नहीं पढ़ी। मैंने यह भी देखा कि मेरे साथ और भी बैठे हुए एड्वाइजारि पैनल सदस्य ने इसे खोल कर पढ़ा हो। फ़िल्म की स्क्रिप्ट लिखकर लेना उस समय का हिस्सा था जिस समय चीज़े डिजिटल नहीं थी। इसे बदलने की जरूरत है। अगर मुझे कोई कहें, तो मैं मौजूदा चलचित्र अधिनियम में से अधिकतर बिंदुओं को कूड़े-दान में फेंक दूंगा, क्योंकि उनका कोई सामाजिक सरोकार और समाज से नाता नहीं है।

फ़िल्म में द्विअर्थी और आपत्तिजनक भाषा को लेकर एतराज किया जा रहा है, इसकी कहाँ तक छूट होनी चाहिए ?

देखिए यहाँ फिर वही बात आ गई कि आप फ़िल्म किसके लिए बना रहे हैं । बोर्ड को ऐसे फ़िल्मों को पास करते हुए फ़िल्म के पोस्टर पर यह नोटिंग करने कि सलाह देनी चाहिए कि इस फ़िल्म में द्वियार्थी और आपत्ति जनक भाषा का प्रयोग है। ऐसे में आप पूरी फ़िल्म को एक लाइन में पूरी फ़िल्म के चरित्र को समेट पाएंगे और समाज के वही लोग इसे देखेंगे जिन्हें विषय से लगाव होगा। आप उस फ़िल्म के पोस्टर पर लिख दीजिए कि फ़िल्म में उत्तेजक दृश्य है। देखिए इसी समाज के लोग जा-जा कर थियेटर को भर देंगे। दर्शक को फैसला लेने दीजिए, यही बदलाव होना चाहिए। फिर आप देखिए कि वो द्वियार्थी शब्दों वाली फ़िल्में देखने जाते है या नहीं। 125 करोड़ की आबादी के लिए 25 लोगों का बोर्ड फैसला कैसे ले सकता है।

सेंसर बोर्ड में सरकार द्वारा चुने गए कौन लोग होते है ?

देखिए यह सवाल बड़ा ही विरोधाभासी रहा है और रहेगा। अभी तक तो मैंने देखा कि इस बोर्ड में परंपरागत सरकार से जुड़े या कहें उनके ही नुमाइंदे रखे जाते रहे है। हर सरकार अपने समर्थन वाले लोगों को इसका मुखिया बनाया, जबकि होना यह चाहिए था कि समाज के अलग-अलग क्षेत्रों से

संबंधित लोगों को इसमे शामिल करना चाहिए था। जैसा किसी फ़िल्म में विवाद संस्कृति को लेकर है तो मैं यह नहीं मानता कि किसी पार्टी के किसी ब्लॉक लेवल के कार्यकर्ता का संस्कृति पर बहुत बड़ा योगदान होगा और वो इस तरह की फ़िल्मों पर फैसला ले। एक ब्लॉक लेवल का कार्यकर्ता हो सकता है समाज सेवक भी हो पर वो उन फ़िल्मों को लेकर उन बातों पर विवाद करते है जिनका उन्हें ज्ञान नहीं होता।

मैं ऐसी जगहों पर पार्टी के कार्यकर्ता की जगह कला इतिहासकार, वास्तुशास्त्री आदि संस्कृति के जानकारों पर ज़्यादा भरोसा करूंगा, क्योंकि उनकी दृष्टि वैज्ञानिक होगी।

सेंसर बोर्ड के अध्यक्ष की भूमिका पर आपकी क्या राय है ?

देखिए चेयरमैन की भूमिका जो गाइड लाइन के अनुसार है वह सेंसर बोर्ड जैसी व्यवस्था को देखने का निगरानी रखने का। रिविज़न कमेटी में जब कोई फ़िल्म जाती है, तो बहुमत कहता है कि यह फ़िल्म वयस्क प्रमाण पत्र के लिए उपयुक्त है। तब यह फैसला चेयरमैन को लेना है की फ़िल्म को प्रमाण पत्र मिलेगा या नहीं। यानि सीधे अर्थों में कहें तो बोर्ड के सदस्यों के पास अपनी कोई स्वतंत्रता नहीं होती है। यह सवाल मैं खुद सेंसर बोर्ड का सदस्य होने के नाते खुद से करता आया हूँ कि मैं कर क्या रहा हूँ। जब मेरे अपने फैसले लेने का कोई अधिकार ही नहीं है। देश की संसद में बहुमत मान्य हो सकता है पर भारतीय फ़िल्म प्रमाणन बोर्ड के रिविज़न कमेटी के फैसले में बहुमत होने के बाद भी मामला चेयरमैंन की कलम से ही पास होता है। इसी मामले को लेकर मैं और हमारे कई साथी माननीय सूचना प्रसारण मंत्री से बात कर रहे है। देखते है.... क्या जवाब आता है।

फ़िल्म प्रमाणन बोर्ड समाज को नैतिकता सिखाने या उसे नीतिबद्ध करने का भी काम करता है ?

फ़िल्म प्रमाणन बोर्ड का काम सिर्फ फ़िल्म को प्रमाणित करना है। समाज के अलग अलग वर्गों के लिए बोर्ड ने लकीर भी खींची है। हाँ, सेंसर बोर्ड का एक बड़ा काम यहाँ यह हो सकता है कि कोई भी फ़िल्म राष्ट्र विरोधी न हो, जिसमें भारतीय संविधान का, मानवीव मूल्यों का अपमान हो ऐसी फ़िल्मों को रिलीज नहीं करना चाहिए। यहाँ एक बात गौर करने वाली यह हो सकती है कि फ़िल्म निर्देशक को भारतीय संविधान आलोचना का अधिकार देता है, अपमान का नहीं। इसीलिए बोर्ड में बैठे लोगों को इसकी भी समझा होनी ज़रूरी है। इसे मैं अपनी ही फ़िल्म के उदाहरण से समझाना चाहूँगा। फ़िल्म 'ज़ेड प्लस', जिसमें मैंने प्रधानमंत्री मुर्दाबाद के नारे लगवाए थे। क्या देश के प्रधानमंत्री की आलोचना नहीं हो सकती? रोज सड़कों पर किसी-न-किसी संगठन द्वारा विरोध प्रदर्शन और पुतलों का दहन आम तौर पर देखा जाता है। ऐसे में फ़िल्म में यह सीन बोर्ड को क्यों बुरा लगा यह मैं अभी तक नहीं समझ पाया हूँ। मैंने फ़िल्म में प्रधानमंत्री की आलोचना की थी न कि अपमान। जब मैंने इस फ़िल्म को सेंसर के लिए भेजी तो वहाँ से जवाब में आता है कि आप यह दृश्य हटा लें और कई लोगों ने यहाँ तक कहाँ कि आप इसे हटा लें अगर हमने पास किया तो हमारा ट्रांसफर आदि हो सकता है। एड्वाइजारि पैनल वाले इसे हटा देते है कि छोड़िए कौन इस मसले में फसेगा। यानि किसी के पास अपना ठोस मत नहीं है कि प्रधानमंत्री मुर्दाबाद फ़िल्म में रह सकता है या नहीं।

ऐसे में बोर्ड को पूरी तरह सरकार के ही हाथों की कठपुतली माना जाना सही होगा ?

अभी भी अगर आप देखे, तो हम इसे ओटोनोमस बॉडी कहते जरूर है, पर क्या यह सरकारी हस्तक्षेप से बचा हुआ है ? क्या आप सरकार से अलग है? इसे देखना होगा। आप देखेंगे तो पाएंगे की इसके सदस्यों की नियुक्ति सरकार तय करती है। इसके सारे फैसले सरकारी होते है तो औटोनोमस तो सिर्फ नाम ही है। आप अमेरिका सेंसरशिप के कांसेप्ट की तरह क्यो नहीं कर सकते इसे। मौजूदा सेंसरबोर्ड पूरी तरह सरकार के नेतृत्व से ही चलता है। बस इसकी संरचना लोकतांत्रिक ढंग से की गई प्रतीत होती है।

किसी फ़िल्म को लेकर हुए विवाद पर राज्य सरकारें उन फ़िल्मों पर प्रतिबंध लगाती है। आपको क्या लगता है, ऐसा होना चाहिए ?

जी नहीं. ऐसा बिलकुल नहीं होना चाहिए। फ़िल्म को लेकर हुए विरोध और उसके बाद सेंसरबोर्ड का उस फ़िल्म को दिया प्रमाण पत्र दोनों अलग-अलग बातें है। इस देश में इतने प्रकार के विषय है कि हर विषय पर विरोध हो सकता है। ऐसे में राज्य सरकारों को चाहिए कि फ़िल्म को प्रतिबंधित

करने के अलावा फ़िल्म पर हो रहे विरोध को सुलझाने का प्रयास करें। जनता को यह अधिकार जरूर है कि वो थियेटर के बाहर जाकर फ़िल्म का विरोध करें, लेकिन यह अधिकार उसे किसी भी सांविधान ने नहीं दिया कि थिएटर में बैठे लोगों के साथ जबरदस्ती कर थियेटर में तोडफोड जैसी घटना को अंजाम दें। राज्य सरकार को ऐसे मामलों में कानून का उल्लंघन करने वालों के खिलाफ केस दर्ज कर सजा देनी चाहिए।

हर कोई समाज की नैतिकता की ज़िम्मेदारी लेना चाहता है। चाहे वो बोर्ड के अंदर बैठे लोग हो या विरोध करने वाले संगठन। मेरी ही फ़िल्म 'ज़ेड प्लस' में मैंने जब एक संवाद "मुझे ऐसा लग रहा हैं की मैं भारत सरकार की नौकरी कर रहा हूँ" एड्वाइजरी पैनल मुझसे भारत शब्द को हटाने को कहती है। क्या इसमे भारत शब्द से समाज की नैतिकता का पतन होता है और किस प्रकार भारत सरकार का अपमान हुआ है? मुझे मंजूर नहीं हुआ और फ़िल्म रिविज़न कमेटी में गई।

सेंसरशिप और पायरेसी के संबंधों पर आप क्या कहना चाहेंगे ?

बहुत ही गंभीर सवाल है जिसका भुक्त होगी मैं खुद भी रहा हूँ। मेरी खुद की फ़िल्म सेंसरबोर्ड में गए बिना ही पायरेट हो गई। मौजूदा चलचित्र अधिनियम में प्रमाण पत्र के लिए पूरी फ़िल्म का होना आवश्यक है आज की तारीख में यह बिन्दु अपने आप में पायरेसी की समस्या को उत्पन्न कर सकता है। वही दूसरी तरफ फ़िल्म की सुरक्षा को लेकर इतना बड़ा खतरा है कि जिस थिएयर में फ़िल्म आप दिखा रहे है हो सकता है उसी में ही फ़िल्म को कैद करने वाला यंत्र लगा हो और फ़िल्म में एक शो के बाद वो मार्केट तथा अन्य इंटरनेट माध्यमों में उपलब्ध होगा। मैं अपनी निजी राय में यह मानता हूँ कि जब फ़िल्म को सेंसर प्रमाण पत्र के लिए भेजा जाए तो फ़िल्म का उतना हिस्सा ही भेजा जाए जीतने से फ़िल्म कि प्रकृति का पता चल सकें। पूरी फ़िल्म बोर्ड के पास होने से भी पायरेसी के खतरे उनते ही बढ़ सकते है, जीतने फ़िल्म रिलीज होने के बाद थियेटर से होती है। आप इसे इस तरह से देखे तो पाएंगे कि फ़िल्म को एड्वाइजरी कमेटी ने अगर सर्टिफ़ाई नहीं और फ़िल्म रिविज़न कमेटी में गई और मान लीजिए वहाँ भी नहीं पास हुई तो निर्माता ट्रिब्यूनल में भेजता है। इन तीनों चरणों से गुरज़ने के दौरान अगर फ़िल्म चोरी हुई तो इसकी ज़िम्मेदारी भी बोर्ड नहीं लेता ऐसे में सेंसरशिप पायरेसी की दृष्टि से भी खतरनाक है और एक बार अगर आपकी फ़िल्म चोरी हुई तो शायद ही दूसरी फ़िल्म बनाने का पैसा आप जुटा पाएंगे। कभी-कभी बोर्ड के अधिकारियों से भी फ़िल्म के चोरी होने का खतरा होता है। मुझे यह पूरा मामला उसी तरह लगता है जैसे 1992 के दंगों में कोई दुकाने लूट रहा है। कोई कुछ लूट रहा है और आप देख रहे होते हैं। आप देख रहे होते हैं, मतलब आप उसमें शामिल भी हैं। बोर्ड की कार्यप्रणाली पर मुझे लगता है कि मैं देख रहा हूँ तो गुनहगार मैं भी हूँ।

फ़िल्म को दिए गए प्रमाणपत्रों के उद्देश्यों क्या सेंसरबोर्ड पूरी तरह पूरा कर पाता है ?

देखिए, सेंसर बोर्ड का काम सिर्फ प्रमाण पत्र देना है। प्रमाणपत्रों के आधार पर फ़िल्म का प्रसारण होना राज्य सरकारों का काम है। मान लीजिए कोई फ़िल्म वयस्कों के लिए प्रमाणित की गई है तो राज्य सरकारों कि ज़िम्मेदारी होनी चाहिए कि इस तरह कि फ़िल्में डीवीडी, सीडी आदि माध्यमों के ज़रिये बाज़ार में न आए।

क्या आप मानते है कि आने वाले दिनों में सेंसरबोर्ड के नैतिक मानदंडों को देखते हुए लेखक फ़िल्मों की कहानियाँ लिखेंगे ?

नहीं। मैं तो बिल्कुल नहीं। मैं नहीं मानता कि कोई भी सेंसरबोर्ड किसी व्यक्ति की अभिव्यक्ति पर पकड़ बना सकेगा। सरकार भी उसको नहीं रोक पाएगी। कल को मैं आपके देश की अवधारणा को चुनौती दे दूँ तो ? मैं देश का नागरिक हूँ,. मैं इस देश की अवधारणा को चुनौती देता हूँ। तो क्या यह देश का अपमान हुआ ? चाणक्य कहते थे कि राष्ट्र था ही नहीं तो क्या वो राष्ट्र का अपमान कर रहे थे ? कल को मैं अपनी फ़िल्म के माध्यम से यह कहूँ कि भारत एक राष्ट्र के तौर पर विकसित हुआ ही नहीं तो मेरी उस भावना को देखा जाना चाहिए, जिसकी वजह से मैं यह कह रहा हूँ न कि उसके शब्द से। इसके बाद मुझे यह अधिकार मिलना चाहिए कि यह फ़िल्म लोग देखे। हाँ दर्शक यह तय करें कि फ़िल्म उन्हें पसंद आई या नहीं। इस पर उनकी टिप्पणी निर्देशक के भविष्य को बदलेगी। इस देश की एक फ़िल्म के साथ जो हुआ क्या वो सही था ? फ़िल्म के संदर्भ में टीवी पर कई नेता यह कह रहे थे कि उस फ़िल्म कि स्क्रिप्ट भारत के प्रधानमंत्री पढ़ेंगे? मेरा सिर्फ यही कहना है कि इस देश के प्रधानमंत्री का यही काम है कि वो फ़िल्म कि स्क्रिप्ट पढ़ें ? मैं सती प्रथा पर अगर कोई फ़िल्म बनाना चाहूं, तो क्या आप उसका सिर्फ इस बात से विरोध करेंगे कि यह हिंदू समाज का अपमान

है। मैं तो वास्तविकता पर आधारित फ़िल्म की कहानी पर बात कर रहा हूँ, फ़िल्म के कंटेन्ट पर बोर्ड निगरानी करें। देश में बालविवाह पर सीरियल चल रहा हैं, वो ठीक लगता है आपको ?

विदेशी फ़िल्मों के भारत में दिखाए जाने के सेंसर मानदंडों पर आपकी क्या राय है ?

पहली बात आपको याद होगा कि पहले विदेशी फ़िल्मों में चुंबन अलाउड था और हिंदी फ़िल्मों में कट जाता था। इसी तरह के मानदंडों में बदलाव है भारतीय और विदेशी फ़िल्मों के प्रमाणीकरण प्रक्रिया में। क्या आप कभी कहते है कि आपको थोड़ा बुखार है ? सीधी सी बात है- आपको बुखार है या नहीं है। बोर्ड ने जो थोड़ी किस दिखाऊँगा वाला जो नया रूप दिखाना शुरू किया है वो सोचनीय है। जेम्स बॉन्ड के संस्कारी होने की भी यही कहानी है। जेम्स बॉन्ड का पूरा मामला हास्यास्पद रहा है। बोर्ड को ऐसे कामों से बचना चाहिए। 10-20 सेकेंड दिखाने या न दिखाने भर से भारत की नैतिकता बचेगी या टूटेगी यह आप तय नहीं कर सकते।

अभी फिलहाल में बोर्ड ने कुछ आपत्तीजनक शब्दों की लिस्ट जारी की है क्या आप उनसे सहमत थे।

वो सारे शब्द तो हम लोगों के पास आए ही नहीं। मुझे तो मीडिया से पता चला की ये शब्द जारी किए गए। मैंने तो यह भी सुना कि चेयरमैन ने कहा कि ये शब्द रिजनल ऑफिसर के लिए जारी किए गए है, न कि फ़िल्म निर्देशकों और समाज के लिए। ऑफिसर इन शब्दों को देखने के लिए तो रखेगा नहीं, जाहिर है फ़िल्म से जारी इन शब्दों को हटाने का आदेश का पालन करेगा। यहाँ बड़ा सवाल यह भी उठता है कि अभी तक की चली आ रही बोर्ड कमेटी ने एक्ट का सही से पालन नहीं किया होगा या एकाएक देश की सत्ता पटलती है और सारे नियम क़ानूनों का बदलाव शुरू कर देती है।

सेंसर बोर्ड को और प्रभावी तथा कला सापेक्ष बनाने के लिए क्या प्रयोग किए जाने चाहिए ?

सबसे पहले तो जितनी जल्दी हो बोर्ड को सरकार की छत्रछाया से हटा देना चाहिए। हम यह स्वतंत्रता फ़िल्म निर्देशक फ़िल्म लेखक को दें कि वह फ़िल्म को समाज के सरोकारों से जुड़ता हुआ कैसे दिखाएं। भारतीय फ़िल्म उद्योग अपनी खुद की एक बॉडी बनाए और तय करें कि उनके खुद के क्या मानदंड होने चाहिए। सरकार ने अपने फायदे के लिए वोट देने के अधिकार कि आयु सीमा को 21 से 18 किया है उसी प्रकार फ़िल्म की प्रकृति को देखते हुए आयु सीमा का वर्गीकरण किया जाना कोई बड़ी बात नहीं है अन्य देशों में यह काफ़ी पहले से लागू है। आप अमेरिकन या ब्रिटिश मॉडल दोनों में से किसी एक को ही उठाकर चलें तो बोर्ड प्रभावी हो सकता है। हॉलीवुड से सीखते हुए हमें उनकी सेंसर प्रक्रिया को भी एक बार आजमा लेने की जरूरत है।

फ़िल्म मोहल्ला अस्सी की खबरों पर अपना पक्ष रखें ?

पहली बार किसी ने मेरा पक्ष सुनने की बात की है। मैंने अभी तक इस मामले पर पूरी बाते बताई नहीं है और मेरे लिए ये बड़ा दुख का कारण है कि लोग मूर्खता में क्या-क्या कहते हैं और एक दिन मैं उस पर बड़े विस्तार से अपनी बात भी रखूँगा। मैं तो इस बात से हैरान हूँ हम लोग कैसी जगह पर जा चुके है की हमारे पास सही सवाल भी नहीं है। आप चंद्रप्रकाश द्विवेदी को कटघरे में खड़ा कीजिए अगर मैंने हिंदू धर्म की धार्मिक भावनाओं को आहत किया है। मैं संविधान से ऊपर नहीं हूँ, किंतु इसके पहले हुआ क्या है इसे तो जानों।

एक तथाकथित ट्रेलर यूट्यूब पर अपलोड हो जाता है, जिसमें सिर्फ गालियां ही गालियां है, जिसमें न निर्माता का नाम है न निर्देशक का नाम है न कैमरामैन का नाम है। कुछ लोग कहते है की निर्देशक ने इसे यूट्यूब पर अपलोड किया तो कुछ कहते है कि द्विवेदी जी नई जमीन टटोल रहे हैं। मैं आज नई जमीन टटोल रहा हूँ, जिस फ़िल्म को मैंने 2011 में बनाई थी। अब यहाँ गौर करने वाली बात यह है कि फ़िल्म को अपलोड करने से पहले वह वीडियो बनाया किसने। मेरा एक सवाल उन लोगों से है जिन लोगों ने मुझ पर आरोप लगाए कि जिस दिन इस वीडियो को यूट्यूब पर अपलोड किया गया उसके बाद से आपने क्या एक्शन लिया जो इसी प्रकृति की पूरी फ़िल्म भी यूट्यूब पर अपलोड हो गई।

आप कह सकते है कि फ़िल्म निर्देशक के पास थी। बिलकुल थी, अगर फ़िल्म निर्देशक के पास है तो फ़िल्म संगीतकार के पास भी होगी, वही फ़िल्म निर्माता के पास भी होगी, फ़िल्म को एडिटर के पास के होने की संभावनाओं को नकारा नहीं जा सकता। एक फ़िल्म साउंड रिकार्डिस्ट के पास होती है तो बैकग्राउंड सांगीत देने वाले के पास भी होगी। फ़िल्म एक्टर के पास भी है। आपने इन लोगों के खिलाफ पुलिस की कार्यवाही क्यों नहीं की। इसी देश के किसी सज्जन के जब फ़िल्म पर हाई कोर्ट के केस दर्ज कराया तो मैं भी पेश हुआ। मैंने अपनी बात रखी और जिस तरह सबके पास फ़िल्म थी

उसी प्रकार मेरे पास भी फ़िल्म होने की बात स्वीकारी। इस दुनियाँ का कोई निर्देशक इतना बेवकूफ नहीं होगा जो गालियों का कोलाज बना कर इस तरह पेश करेगा।

फ़िल्म सेंसरबोर्ड के पास गई ही नहीं अगर जाती भी तो मैं अपने निर्देशकीय कार्य को डिफ़ेंड करने के लिए वहाँ खड़ा होता। यहाँ तक कि आपको सेंसर बोर्ड को प्रोमो भी भेजना होता हैं, वो तक नहीं गया। मतलब साफ हैं यह वीडियो सिर्फ यूट्यूब के लिए बनाया गया होगा।

फ़िल्म पर सेंसर कट होने की वजह से जब सवाल किए गए तो उनका जवाब और भी चौकाने वाला था। बोर्ड की तरफ से जवाब मिला कि 10/04/2014 को फ़िल्म सर्टिफिकेशन के लिए अप्लाई किया गया। बोर्ड द्वारा 22/04/2014 की डेट दी गई। 22/04/2014 को निर्माता फ़िल्म के साथ आए ही नहीं। सेंसर बोर्ड ने पत्र में यह भी लिखा हैं कि निर्माता ने फ़िल्म सर्टिफिकेशन का कैंसिलेशन चार्ज भी नहीं दिया हैं। सेंसरबोर्ड के मेम्बर तथा थियेटर बुक हो चुका था ऐसे में निर्माता ने अपने आने या न आने की पूर्व सूचना भी नहीं पहुंचाई। आपने ऐसा क्यों किया? यह तो मैंने नहीं किया हैं न। यह मेरे अधिकार क्षेत्र में भी नहीं है। फ़िल्म को निर्माता या कंपनी क्रासवर्ड प्राइवेट लिमिटेड ही अप्लाई कर सकती हैं। अप यह तर्क दे सकते हैं कि आपकी फ़िल्म पूरी नहीं हुई थी। लेकिन जो फ़िल्म लीक हुई हैं, उसमें सेंसर कॉपी लिखा हैं। जब आपको लगता हैं कि फ़िल्म पूरी नहीं थी तो आपको फाइनल कॉपी बनाने की जरूरत क्या थी। इन सब का उत्तर निर्माता के पास हैं। लेकिन सभी सवाल करते हैं चंद्रप्रकाश द्विवेदी से ? एक फ़िल्म पत्रकार ने मुझसे सवाल किया कि द्विवेदी जी निर्माता ने आरोप लगाया हैं हार्ड डिस्क आपके पास हैं ? मुझे हंसी आती है ऐसे पत्रकारों पर जो फ़िल्म की पत्रकारिता के कॉमन सेंस से भी वाकिफ नहीं हैं। फ़िल्म की हार्ड डिस्क क्या सिर्फ अकेले मेरे {निर्देशक के} ही पास होगी? फ़िल्म की एक मास्टर कॉपी तब तक एडिटर के पास होगी जब तक फ़िल्म सेंसर से पास नहीं होगी। क्या सारी ज़िम्मेदारी निर्देशक की होगी ? अगर आपके पास कोई कॉपी नहीं है, तो आपने कैसे फ़िल्म सर्टिफिकेट के लिए अप्लाई कर दिया। सीधी सी बात यह हैं मनीष जी जिस दिन यह फ़िल्म सर्टिफ़ाई हो गई निर्माता को मुझे 1 करोड़ देना होगा आगे आप खुद समझदार हैं।

धन्यवाद सर

नोट :- शोधार्थी **सेंसरशिप के नैतिक मानदंड तथा हिंदी सिनेमा** विषय पर पीएचडी कर रहें हैं। यह साक्षात्कार उनके द्वारा इसी विषय के उद्देश्यों को पूरा करने हेतु किया गया हैं।

An Interview with Dr. Ana Stjelja

Serbian writer and translator

बात-चीत

Hindi deserves all the respect and should be taken very seriously. Beside English and Chinese, Hindi is probably the most spoken language in the world. For me personally, this is a very beautiful language.

Ms. Latika Chawda
Maharashtra, Bharat

Madam, your introduction please!

A. S. : My name is Ana Stjelja (1982). I come from Serbia, a country in Southeastern Europe, but currently residing in Jeddah, Saudi Arabia. I am a writer (poet, essayist, short story writer...), literary translator, journalist, independent scientific researcher, book cover designer, web designer and self-publisher. Since 2002 I have published 17 books, whether as the author, translator or editor. I am the author of ten books, the translator of five books and the editor of two books. I am a member of The Association of Writers of Serbia, The Association of Literary Translators of Serbia and The Association of Journalists of Serbia.

How many languages do you translate in?

A. S. : I work as a freelance literary translator from English, Spanish, Portuguese and Turkish. I speak a little French and Italian, and Hindi which I have only a basic knowledge of.

How did you develop your interest in Indian studies?

A. S. : As a high school girl I was reading poems of great Indian poet Rabindranath Tagore. I guess this was my first meeting with the word „Indian'', or something related to India in the exact context. Many years later, when I went to college, out of curiosity I started to read more about Indian literature, its rich culture and tradition. It was a self-study. I also got interested in Indian cinema, which gave me better insight into the way of life of Indian people, their customs and religious practices, and the least, but not the last, helped me in learning the basics of Hindi language. After getting involved in Indian studies, I started to work on the translation of the poetry of famous Indian poets. I translated the poems of Rabindranath Tagore and Harivansh Rai Bacchan from English and published them in Serbian prominent literary journals. I was happy to see that those translations were well received by the readers and the literary audience, so I continued with my cultural mission of building some kind of cultural and literal bridges between Serbia and India.

Where have you studied/did your Ph.D.? What were your topics?

A.S. : I studied at the Faculty of Philology, Belgrade University. My major was Turkish language and literature. Also, I was studying English, Arabic, Ottoman

Turkish language, Serbian cultural history, Theory of literature and some other subjects related to language and literature. After graduating in 2005, I continued with master studies at the same faculty. At that time, I was doing the research on Sufism (Islamic mysticism) and Sufi poetry. The topic of my master thesis (defended in 2009) was related to the life and work of two great Turkish/ Persian poets Mawlana Rumi and Yunus Emre.

While doing this research I was making comparisons between traditions, cultures and languages of the oriental world, (including India), in the context of Mawlana's philosophical teaching in order to determine his influence on these cultures. Eventually, in 2012, at the same faculty I successfully defended my doctoral thesis on the life and work of Serbian writer, poetess and benefactress Jelena J. Dimitrijević whose life and literary work were partly dedicated to India. This extraordinary woman visited India in 1927 in order to meet her fellow poet Rabindranath Tagore. As she didn't find him in his home in Bengal, she continued her trip to Shantiniketan decisively to meet the great Indian poet. This unique and very amusing experience she described in her book titled „Letters from India" which was published in 1928. Beside Tagore, Jelena was being in friend relationship with famous Ledi Dorab Tata. Studying Jelena's literary work and her relations with India, my knowledge was enriched with new facts that were precious for my further research.

What is your opinion regarding Hindi as a language?

A. S. : As has been a language of a large population, and widely spoken, Hindi deserves all the respect and should be taken very seriously. Beside English and Chinese, Hindi is probably the most spoken language in the world. For me personally, this is a very beautiful language. I find it very easy to learn due to my knowledge of various languages. For instance, the Hindi vocabulary has some similarities with Arabic and Turkish vocabulary, the grammar is very simple and understandable and quite compatible with my language as my language belongs to Indo-European language family. What I especialy like in Hindi as someone who has just started learning it, is the Hindi transcription to Latin alphabet. It is so developed that the beginner can easily write in it and communicate with others even before learning the Hindi alphabet. The only element of Hindi language that I find a little bit hard to learn is the alphabet. It needs a lot of practice to learn writing in Hindi.

What difficulties do you face while translating any text/poetry or any genre in Indian context to European context?

A. S. : Personally, I don't face many difficulties while translating any text in Indian context due to my good knowledge of Indian culture and its tradition. The translation of any text related to India includes a big knowledge on the very rich and diverse Indian culture. If someone wants to translate any content related to India, he/she must have at least basic knowledge of Indian culture for it is much incorporated into the language. Therefore, having knowledge on Bharat and its cultural and traditional values is of big help in any translation work. This could be a reason why many translators skip translating contents related to India. It is just not possible without having knowledge of its history, culture, tradition, religion, customs… In one word, this kind of translation requires a highly educated translator.

As per your knowledge, what steps are being taken in Serbia regarding technical advancement or Machine Translation from Serbian to Hindi and Hindi to Serbian?

A. S. : Not very much. The only tool which is used for now is google translate tool. Hopefully the technical tools or machine translation from Serbian to Hindi and reverse translation option will be more developed in the future.

What do you feel is the status of Hindi/Bharat in all other languages you translate in?

A. S. : As a literary translator I find Hindi very important language. Indian literature is a very big one, there are many famous writers who deserve to be translated from their original language. For now, translators depend only on English translations of the texts originally written in Hindi which I don't consider as a good practice. My great wish and, I would say a plan, is to learn Hindi so I can enjoy translating the literary works of the great Indian writers from their native language. Knowing Hindi would be a real reward for any reputable literary translator.

Is 'Indology' the subject pursued at University level in Serbia?

A. S. : Unfortunately, the Faculty of Philology in Belgrade as the most prominent academic institution for language studies doesn't have the Department of Indology or Indian studies. However, Serbia had one very prominent linguist and expert in Sankrit, professor Radmilo Stojanović who passed away in 2002. He taught Sanskrit for decades at *The Institute for foreign languages*. Since 1967 when he began teaching Sanskrit, he educated many generations of students. At the present time in Serbia, we have the Vedic Academy, which is organizing a course for Sanscrit. The course is conducted by one of the professor's best students.

What is the scope for Hindi translators in Serbia?

A. S. : It is not a big scope, actually. For sure, the need for Hindi translators would be bigger if the two countries, Serbia and India, had more intensive cooperation in many levels, especially educational. Since the two countries were developing quite good and friendly relations in the past, there is a strong reason to believe that it will be even better in the years to come.

How do you see 'Translation' on global level?

A. S. : I consider language as an essential treasure, but priceless one. Language, as the immaterial heritage represents also an important part of the national identity. It contributes to the diversity of the world. Knowing many languages is opening many doors. That is why the translation work is of a big importance and should be more valued. Translation as a craft had been through many phases in the past, according to the changes of the historical, political, social and cultural climate. Today, translation work is facing a new challenge. Global political and social events affect the translation work as well. For instance, these days we are facing the need for translators in the war zones or in the refugee camps. Many translators are working as volunteers just to help refugees (mostly from Syria and Middle East) communicate easier with locals. In this, I see a totally new side of translation work, which is getting a kind of social and human aspect. As far as I am concerned, knowing foreign languages and doing translations is the best way for making bridges between people. That is what I do with great pleasure and what I will keep doing in the future.

ख़लील ज़िब्रान की कविता का हिंदी अनुवाद

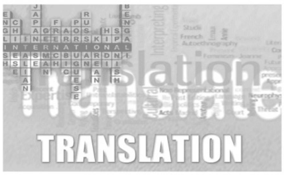

अनूदित

‘दी प्रोफेट’ अंग्रेजी भाषा में लिखी गई ख़लील ज़िब्रान की 26 गद्य-पद्य कहानियों का संग्रह है. इनमे से एक का पद्यात्मक हिंदी अनुवाद पाठकों के समक्ष प्रस्तुत है-

Ms. Megha Acharya
Maharashtra

जब अलमित्रा एक बार फिर बोल पड़ी और पूछने लगी, “विवाह के संबंध में क्या कहेंगे मालिक?” और उसने जवाब देते हुए कहा,

आप साथ जन्मे और आगे भी साथ रहेंगे हमेशा।

आप तब भी साथ रहेंगे जब मृत्यु का काला साया आपके जीवन में अंधेरा कर देगा।

हाँ, आप ईश्वर की धुंधली स्मृतियों में भी साथ रहेंगे।

परंतु आपके संगति में तनिक अंतराल भी रहने दीजिए,

और स्वर्गीय पवन को अपने बीच थिरकने दीजिए।

एक दूसरे से प्रेम अवश्य करें, परंतु प्रेम को बंधन बनाने की अपेक्षा

इसे आप दो आत्मारूपी किनारों के बीच बहता समुद्र बनने दीजिए।

भरिए प्याले एक दूसरे के लिए, पर एक ही प्याले को होटों से मत लगाइए।

बाँटिए अपनी रोटी एक दूसरे से पर एक ही रोटी मत खाईए।

गाईए और नाचिए एक साथ और आनंदित रहिए, परंतु एक दूसरे को अकेले भी रहने दीजिए वैसे ही,

वीणा के तार अलग-अलग रहकर भी एक ही संगीत उत्पन्न करते हैं जैसे।

अपना हृदय एक दूसरे को अर्पित करे न कि एक दूसरे के हवाले,

हृदय तो जीवन के ही हवाले रह सकता है केवल।

और साथ खड़े रहे एक दूसरे के, न कि अधिक निकट :

क्योंकि देवालय के स्तंभ एक दूसरे से दूर खड़े होते है,

और बलुत और सरु के वृक्ष एक दूसरे के छाया में कभी बढ़ नहीं सकते।

हिंदी साहित्य में युग प्रवर्तक के रूप में प्रेमचंद

भाषा

दुनिया में अनेक घटनाएँ घटित होती हैं परंतु कलाकार और रचनाकार भावुक तथा संवेदनशील होने के कारण उन घटनाओं से प्रभावित होते हैं। वे घटनाएँ उसके दिमाग में उथल-पुथल मचाती है और सृजनकर्ता कलम उठाकर उन घटनाओं को एक विशिष्ट कलात्मक रूप देकर अपनी रचना में स्थान देता है।

डॉ. अन्नपूर्णा सी.

प्रेमचंद आधुनिक हिंदी साहित्य की अमर विभूति है। उर्दू साहित्य से हिंदी साहित्य में शिरकत कर उन्होंने कहानी और उपन्यास विधा को ही अपनी अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया। तिलस्मी, जासूसी, अय्यारी उपन्यासों के चंगुल में फंसे हिंदी उपन्यास साहित्य का स्वरूप तब बदलने लगा, जब यथार्थ जीवन की समस्या पर आधारित अपने प्रथम उपन्यास 'सेवासदन' के साथ सन 1917 में प्रेमचंद ने हिंदी उपन्यास जगत में पदार्पण किया।

दुनिया में अनेक घटनाएँ घटित होती हैं, जिन्हें चिंतक और कलाकार भी देखते हैं। परंतु कलाकार और रचनाकार भावुक तथा संवेदनशील होने के कारण उन घटनाओं से प्रभावित होते हैं। वे घटनाएँ उसके दिमाग में उथल-पुथल मचाती है और सृजनकर्ता कलम उठाकर उन घटनाओं को एक विशिष्ट कलात्मक रूप देकर अपनी रचना में स्थान देता है। उसी प्रकार प्रेमचंद भी अपने सामाजिक परिवेश, नवजागरण और पाश्चात्य प्रभाव से प्रभावित होकर गद्य साहित्य में आदर्शोन्मुख यथार्थवाद की स्थापना की। यथार्थ जीवन को जनसाधारण की भाषा में अभिव्यक्त कर, सामाजिक समस्याओं का चित्रण कर उनमें बहुतों के निदान और समाधान ढूंढ निकालना उन का लक्ष्य था। बचपन से ही चार्ल्स डिकेन्स, टॉलस्टाय, रवींद्रनाथ टैगोर, शरतचंद्र जैसे विश्वविख्यात उपन्यासकारों की रचनाओं के अध्ययन में उनकी विशेष रुचि थी। इस प्रकार जीवन को परखने की क्षमता, सामाजिक समस्याओं का विश्लेषण करने की दक्षता तथा विश्व उपन्यास साहित्य से परिचय ने उन्हें एक सुष्ठ उपन्यासकार बना दिया। सामाजिक परिवर्तन के उद्देश्य से स्थापित ब्रह्म समाज, आर्य समाज यीथोसाफ़िकल सोसाइटी जैसी सामाजिक संस्थाओं के प्रयत्नों से राज्य में परिवर्तन का ज्वार उत्पन्न हुआ। जब सन 1917 में भारत के राजनीतिक वातावरण में उल्का के समान गांधी जी ने प्रवेश किया, तब प्रेमचंद जैसे चिंतनशील साहित्यकार स्वतंत्रता संग्राम तथा सामाजिक परिवर्तन के लिए किए गए प्रयत्नों में अग्रणी हो गए। गांधी जी के युग में पले प्रेमचंद के उपन्यास और कहानियाँ उनके आदर्शों से भरे हुए थे।

प्रेमचंद का रचना काल द्विवेदी एवं छायावाद युग दोनों में फैला है। इसलिए उनके कहानी और उपन्यास साहित्य में दोनों के अंतर्विरोध का प्रभाव दिखाई पड़ता है। प्रेमचंद के आविर्भाव का युग भारतीय समाज में अत्यंत निर्णायक परिवर्तनों, प्रवृत्तियों, धाराओं और प्रेरणाओं की क्रियाशीलता का युग था। एक ऐसा युग, जब उन्नीसवीं सदी का आरंभ हुआ, तब भारत का नवाजागरण धीरे-धीरे परिपक्व हो चला था। वह बौद्धिकता और उच्च वर्ग तक सीमित रहने के बंधनों को तोड़कर जन-जागरण का रूप ले रहा था। उनके कथा साहित्य में मध्यमवर्गीय के जागरण को स्थान मिलने लगा और उस का यथार्थ चित्रण प्रस्तुत हुआ।

प्रेमचंद हिंदी साहित्य के प्रथम मौलिक कहानीकार है। उन्होंने लग-भग तीन सौ कहानियाँ लिखी। उन्हें कहानी सम्राट कहा जाता है। उनकी कहानियों में 'कफन', 'पूस की रात', 'शतरंज के खिलाड़ी', 'होली का उपहार', 'बड़े घर की बेटी', 'बूढ़ी काकी', 'पंच परमेश्वर', 'ईदगाह', 'सुजना भगत', 'सवासेर गेहूँ', 'निमंत्रण' आदि सर्वश्रेष्ठ कहानियों के रूप में स्वीकार किया गया है। इन कहानियों की कथावस्तु सामाजिक, धार्मिक, ऐतिहासिक, राजनीतिक, पौराणिक, मनोवैज्ञानिक आदि पृष्ठभूमि से ली गई अमूल्य धरोहर है। प्रेमचंद के कहानी साहित्य में भारत के जन-जीवन को एक व्यापक रूप मिला है। उनकी कहानियों में वैविध्य का पूरी कलात्मकता और धार्मिकता के साथ समाजोपयोगी अंकन हुआ है। उन की कहानियों को जितनी बार पढ़ेंगे, जितनी बार चिंतन मनन करेंगे, उतनी बार अपने आप को, अपने समाज को और अपने चारों ओर के जीवन को नए तरह से पहचान पाएंगे, समझ पाएंगे।

प्रेमचंद कहानीकार के अलावा प्रसिद्ध उपन्यासकार भी थे। प्रेमचंद की दृष्टि में उपन्यास मानव चरित्र का चित्र मात्र था और उपन्यास का मूल तत्व था मानव चरित्र पर प्रकाश डालना और उसके रहस्यों को खोलना। इस दृष्टि

के अनुसार ही उन्होंने यथार्थपरक, आदर्शोन्मुख यथार्थवाद के साथ-साथ संयुक्त परिवार का विघटन ग्रामीण, जीवन तथा मनोवैज्ञानिक दृष्टि को भी उपन्यासों में चित्रण किया है।

सेवासदन उपन्यास में आदर्शोन्मुख यथार्थवाद के साथ संयुक्त परिवार के विघटन का चित्रण मिलता है। इसके साथ धन की लालसा, दहेज प्रथा, बेमेल विवाह और वैश्या प्रथा की समस्या का चित्रण भी किया गया है। यह एक कुंठा ग्रस्त परिवार की कहानी है। 'प्रेमाश्रम' में संयुक्त परिवार में कलह और विद्रोह, जमींदारों का हृदय परिवर्तन, 'रंगभूमि' में राजनीतिक परिवेश ने परिवार कायाकल्प में रहस्य की छाया में पारिवारिक संबंधों का तानाबाना, 'निर्मला' में विधुर विवाह की यातना, 'प्रतिज्ञा' में हिंदू परिवार में विघटन की स्थिति, 'गबन' में नारी का आभूषण प्रेम और उसके दुष्परिणाम, 'कर्मभूमि' में दांपत्य संबंध और जीवन मूल्यों के टकराव का चित्रण किया है। 'गोदान' उपन्यास में आर्थिक दबाव में संयुक्त परिवार के विघटन का चित्रण किया गया है। 'गोदान' को भारतीय कृषक जीवन का महाकाव्य भी कहते है। प्रेमचंद की उपन्यास कला की भांति ही समय के साथ बदलते पारिवारिक संबंधों के अध्ययन की दृष्टि से भी अपने आप में संपूर्ण कृति है। इसमें परिवार के संघटन और विघटन के वे सभी चित्र उभरते है, जिनसे आज भी भारतीय गाँव के पारिवारिक जीवन का ताना-बाना बनता है। इस प्रकार प्रेमचंद जी ने सन 1917 से लेकर 1936 तक लगभग दो दशकों तक अपने उपन्यासों के माध्यम से भारतीय समाज के जीवन चित्र बनाते रहे। प्रेमचंद के यथार्थवादी दृष्टिकोण के विकास में उनके निजी तकनीकों का भी काफ़ी योगदान था। उनकी निजी तकनीकों ने उन्हें रचनात्मक प्रेरणा दी।

संदर्भ:

हिंदी साहित्य का इतिहास , डॉ. नगेंद्र

प्रेमचंद की भाषाई चेतना, (सं.) प्रो. दिलीप सिंह, दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा, चेन्नई।

असहिष्णुता के दौर में भीष्म साहनी की कहानियां

भाषा

दुनिया में अनेक घटनाएँ घटित होती हैं परंतु कलाकार और रचनाकार भावुक तथा संवेदनशील होने के कारण उन घटनाओं से प्रभावित होते हैं। वे घटनाएँ उसके दिमाग में उथल-पुथल मचाती है और सृजनकर्ता कलम उठाकर उन घटनाओं को एक विशिष्ट कलात्मक रूप देकर अपनी रचना में स्थान देता है।

शिव दत्त
एम. फिल. (तुलनात्मक साहित्य)
हिंदी एवं तुलनात्मक साहित्य विभाग
महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा, महाराष्ट्र
Email- Shidutt041@gmail.com
Contact- 8381051307, 9891590912

वर्तमान दौर से हम सब वाकिफ़ हैं। स्वतंत्रता पूर्व से भारत में जो धार्मिक उन्माद व सांप्रदायिक हिंसा का दौर चला, वह आज भी बदस्तूर जारी है, जिसे 1992 के बाबरी विध्वंस के बाद हुए हिंदू-मुस्लिम सांप्रदायिक हिंसा, 2002 के गोधरा कांड के नरसंहार और 2013 में हुए मुजफ्फरनगर के सांप्रदायिक दंगो में देखा सकता है। भारत में सांप्रदायिकता की समस्या को देखते हुए भीष्म साहनी का यह कथन आज अधिक प्रासंगिक हो जाता है कि *''सांप्रदायिकता की समस्या बंटवारे के साथ खत्म नहीं हुई है। वह वक्त मनोवृति है जो आज भी हमारे समाज में रह-रहकर अपना भयावह रूप दिखाता है।''* भीष्म साहनी एक ऐसे रचनाकार थे, जिन्होंने विभाजन के दौरान हुए सांप्रदायिक हिंसा व विध्वंस को न सिर्फ प्रत्यक्ष देखा, अपितु उसके भुक्तभोगी भी रहे हैं। यह यथार्थ व चटख अनुभव उनके कालजयी उपन्यास *'तमस'*, *'निमित्त'*, *'नीली आंखे'*, *'अमृतसर आ गया है'*, *'सरदारनी'*, *'जहूरबख्स'*, *'पाली'*, *'झुटपुटा'* व *'बीरा'* आदि कहानियों में अधिक मुखर रूप में अभिव्यक्त हुआ है।

रावलपिंडी में जन्में भीष्म साहनी की आरंभिक शिक्षा लाहौर व उच्च शिक्षा पंजाब विश्वविद्यालय से संपन्न हुई। भारत-पाकिस्तान विभाजन की त्रासदी का दंश भीष्म व उनके समस्त परिवारजनों ने भी सहा। विभाजन के बाद पाकिस्तान से विस्थापित हुए लाखों परिवारों में एक परिवार भीष्म साहनी का भी था, जो विभाजन के बाद अमृतसर (भारत) में आकर बसा। भीष्म उस समय 32 वर्ष के थे और विभाजन की त्रासदी व उस समय के हिंदू-मुस्लिम सांप्रदायिक हिंसा को उन्होंने बड़े करीब से देखा। साथ ही तत्कालीन सामाजिक, राजनैतिक व सांप्रदायिक स्थिति तथा उससे उपजी मानसिकता का उन्होंने गहन अध्ययन व विश्लेषण किया, जो उनके उक्त रचनाओं में दिखाई पड़ता है। भले ही भीष्म साहनी व उनके परिवार ने विभाजन व सांप्रदायिकता के दंश को झेला हो, किंतु भीष्म ने सदैव धर्म निरपेक्ष दृष्टिकोण को ही अपने लेखन में सर्वोपरि रखा। भीष्म ने न सिर्फ विभाजन व उससे उत्पन्न धार्मिक उन्माद व सांप्रदायिकता को चित्रित किया, अपितु उसके जड़ व कारण को भी अपनी रचनाओं में चित्रित किया। उन्होंने बड़ी निर्भीकता से अपने लेखन में राजनीतिक सत्ता व धार्मिक कट्टरपंथियों को देश में फैले सांप्रदायिकता तथा धार्मिक संघर्ष के लिए उत्तरदायी ठहराया है।

भीष्म साहनी उन रचनाकारों में से हैं, जिन्होंने प्रगतिशील व नई कहानी, दोनों ही धाराओं में सफल लेखन किया है। राजेंद्र यादव उन्हें दबे-कुचले और समाज के पिछड़े लोगों की समस्याओं को जनभाषा में अत्यंत सटीक तरीके से अपनी रचनाओं में अभिव्यक्त करने वाला लेखक मानते है। यही वजह है कि उन्हें प्रेमचंद की परंपरा का साहित्यकार कहा गया है। प्रख्यात आलोचक नामवर सिंह भी भीष्म साहनी को प्रेमचंद की परंपरा के अहम् और प्रमुख रचनाकार मानते हैं। जिस तरह से प्रेमचंद ने सामाजिक वास्तविकता और पूंजीवादी व्यवस्था के दुष्परिणामों को अपनी रचनाओं में चित्रित किया है, उन्हीं विषयों को आजादी के बाद भीष्म साहनी ने अपनी लेखनी का विषय बनाया। इस दृष्टि से भीष्म साहनी को गांधी के अंतिम व्यक्ति की आवाज उठाने वाला लेखक के रूप में भी देखा जाता है।

आजादी से लेकर वर्तमान समय तक हिंदू-मुस्लिम सांप्रदायिक उन्माद ने बार-बार देश की एकता व अखंडता पर आघात किया है और वे आघात और जख्म भीष्म जी द्वारा निसृत रचनाओं में चीत्कार करते हैं। यह चीत्कार 'जहूरबख्श' कहानी में सांप्रदायिक आंधी में ध्वस्त और तबाह हुए एक मुसलमान वृद्ध लेखक के दर्द में देखने को मिलता है। दुख की बात यह है कि इस देश के एक वर्ग को मुस्लिम रचनाकारों द्वारा हिंदी में लेखन में भी सांप्रदायिकता की दुर्गंध आती है।

विभाजन ने भीष्म जी के अंतर को भीतर तक झिंझोड़ा है। वह कहते हैं कभी-कभी अतीत बहुत दर्द देता है। उनकी 'पाली' कहानी विभाजन के दौरान सांप्रदायिक नृशंसता का जीता-जागता दस्तावेज है। विभाजन के बाद भी सीमा के दोनों ओर धार्मिक कट्टरवाद और क्रूरतम वैमनस्य के लिए ज़िम्मेदार नकाबपोश तत्वों का लेखक ने उक्त कहानी में पर्दाफाश किया है। एक तरफ पाकिस्तान में जहां मौलवी के लिए बालक पाली को सुन्नत करवाकर, दीन का बच्चा बनाकर इल्ताफ बनाना ज़रूरी था, वहीं दूसरी ओर सीमा के इस पार हिंदू चौधरी के लिए उसका मुंडन करवाकर, चुटिया लहराकर हिंदू का यशपाल बनाना उतना ही पुण्य का सिला बना। पाली का मानस, धर्म के ठेकेदारों के फरमानों के समक्ष कुचला गया। वह तो एक निरीह बालक था, मां की ममता का भूखा। इस कहानी में बड़े असरदार तरीके से धर्म के झंडाबरदारों की असहिष्णुता व कट्टरता को दर्शाया गया है। भीष्मसाहनी इस कहानी के माध्यम से सीमा के दोनों ओर सांप्रदायिकता व धार्मिक उन्माद को हवा देने वाले मठाधीशों को चिह्नित करते हैं, इसलिए उनकी उनकी यह कहानी अपने बेबाकपन में अनूठी बन पड़ी है।

तत्कालीन सांप्रदायिकता की भावना ने जहां लोगों को क्रूर व एक दूसरे के खून का प्यासा बनाया, वहीं ऐसे हिंसक वातावरण में भी कुछ लोगों में बसने वाले मानव ने अपने मानवीय चरित्र को विचलित नहीं होने दिया। भीष्म साहनी दंगों के जुनून में होश गंवाए वहशी-दरिंदों की भीड़ में भी ऐसे मनुष्य को पहचानना नहीं भूलते, जिनके लिए मानव धर्म ही एकमात्र धर्म है व जिन्होंने धर्म के नाम होने वाली हिंसा का पुरज़ोर विरोध किया है। चूँकि भीष्म जी स्वयं मानवता के प्रबल पक्षधर थे व आजीवन उन्होंने इसी मानवीय संवेदना जो संजोया था। ऐसे ही मानवीय लक्षणों को व्यक्त करती 'सरदारनी' कहानी की बेबाक सरदारनी पाठकों में सच, साहस और मानवीय मूल्यों को अब भी जीवित रखने की एक ईमानदार कोशिश है।

भीष्म साहनी की ऐसी ही एक अन्य कहानी 'निमित्त' में भी विभाजन के दौरान मार-काट की भयावह स्थितियों के बीच मानवीय संवेदना के संकेत देखने को मिलते हैं। चाय पीने के दौरान एक बुजुर्ग बार-बार यह दुहराते हैं कि मठरी पर जिसका नाम लिखा होगा वह उसे जरूर खाएगा। यानी जो होना होगा वह होकर रहेगा। कोई न कोई निमित्त अवश्य बनेगा। बार-बार उनके यह कहने से तंग आकर चाय पीने बैठे हुए लोग जब उनसे पूछते हैं तो वह अपनी नौकरी के दिनों की एक कथा बताते हैं, जिसमें उन्होंने सांप्रदायिक हिंसा के दौरान बरसों से नौकरी कर रहे एक मुसलमान इमामदीन को कंपनी की गाड़ी से सुरक्षित स्थान पर पहुचाकर उसकी प्राण रक्षा की थी। आसपास के लोगों को एक मुसलमान के कंपनी की गाड़ी से बचकर निकल भागने की भनक लगती है तो वे मैनेजर साहब के पास विरोध करने आते हैं। मैनेजर साहब कंपनी की दूसरी गाड़ी उन लोगों को यह कहते हुए दे देते हैं, "लो भाई इससे ज्यादा मैं क्या कर सकता हूं। एक मोटर वह ले गया है, दूसरी तुम ले जाओ। अगर उसे बचना है तो बच जाएगा, अगर उसका खून तुम्हारे हाथों होना लिखा है तो वह होकर ही रहेगा।''1 दूसरी मोटर से पीछा करने वाले लोग जब पहली मोटर के पास पहुँचते हैं तो उन्हें पता चलता है कि उस गाड़ी के ड्राइवर ने ही इमामदीन का काम तमाम कर दिया था। परंतु वास्तविकता यह थी कि उस मोटर के हिंदू ड्राइवर ने वक्त की नजाकत को भांपकर इमामदीन को सीट के नीचे छिपा था और उसके माल-असबाब को आग के हवाले कर दंगाइयों को यह दिखाने में सफल रहा कि इसी आग में उसने इमामदीन को भी मौत के घाट उतार दिया है। इस कहानी में तत्कालीन जनभावना, बदले की प्रवृत्ति, इंसानियत के रिश्ते को बड़ी गहराई के साथ उकेरा गया है।

भीष्म साहनी की कहानियों में हर तरह के पात्र हैं व उनकी समस्याएं और उनके संघर्ष देखने को मिलते हैं। वें अपने पात्रों के परिवेश को गहरी संवेदना और आत्मीयता से उठाते हैं और उनकी चारित्रिक खूबियों और खामियों का विश्लेषण व मूल्यांकन बड़ी बारीकी से करते हैं। सांप्रदायिकता के उस दौर में अपने पात्रों के माध्यम से भीष्म जी ने सांप्रदायिक व्यक्ति के मनोविज्ञान को 'अमृतसर आ गया है' कहानी में व्यक्त किया है, जिसमें पाकिस्तान से भारत आ रही ट्रेन में बैठे हिंदू-मुसलमान यात्रियों के आपसी व्यवहार, हँसी-मज़ाक, रेल के डिब्बे में घुसने की कोशिश कर रहे लोगों के प्रति डिब्बे में बैठे लोगों के व्यवहार तथा खुद के सुरक्षित दायरे के भीतर रहते हुए दूसरे पर हावी होने की मानसिकता को उभारा गया है। ट्रेन में यात्रा कर रहे तीन पठान एक दुबले-पतले व्यक्ति का बार-बार मजाक उड़ाते हैं, परंतु वह उनका विरोध नहीं करता। यह दुबला बाबू हिंदू है और ट्रेन पाकिस्तान के मुस्लिम बहुल इलाके से गुजर रही है। अत: चुप रह कर बर्दाश्त कर लेने में ही वह अपनी भलाई समझता है। परंतु जैसे ही ट्रेन हरवंशपुरा पार करके अमृतसर पहुँचती है, इस दुबले-पतले आदमी में गजब का जोश, फुर्ती और शक्ति का संचार हो जाता है। वह लंबे-चौड़े कद-काठी के पठानों पर गालियों की बौछार करने लगता है। स्टेशन पर उतरकर जब थोड़ी देर बाद वह ट्रेन में लौटता है तो उसके हाथ में लोहे की छड़ होती है। इरादा साफ़ है। इस बीच पठान मौका पाकर उस डिब्बे से निकलकर उन डिब्बों की तलाश में बढ़ जाते हैं, जिनमें मुसलमानों की संख्या ज्यादा है। यहाँ भीष्म लिखते हैं कि "जो विभाजन पहले प्रत्येक डिब्बे के भीतर होता जा रहा था, अब सारी गाड़ी के स्तर पर होने लगा था।"2 कहानी में भीष्म जी उस दुबले पतले हिंदू बाबू के माध्यम से एक सांप्रदायिक व्यक्ति की पहचान कराते हैं, जो समय व अनुकूल माहौल पाकर सांप्रदायिक बन हिंसा करने पर उतारू हो जाता है। निसंदेह भीष्म जी व्यक्ति की ऐसी प्रवृति और मनोवृति को अच्छे से जानते थे।

कहानी में लेखक ने दर्शाया है कि हिंदू हो या मुसलमान, दोनों अपने-अपने इलाकों में दूसरे के साथ ज़्यादती करते हैं। इसके साथ ही लेखक ने यात्रियों की उस मनोवृतियों के ओर संकेत किया है जिसमें ट्रेन के भीतर जगह पा चुके यात्री अगले स्टेशनों पर चढ़ने वाले यात्रियों को अपनी सुविधा में खलल के रूप में देखते हैं और बहुत ही निर्मम, अमानवीय व्यवहार करते हैं। जब ट्रेन पाकिस्तान के इलाके में किसी स्टेशन पर रुकती है तो एक हिंदू परिवार शहर में दंगा फैल जाने के कारण अपने माल असबाब के साथ ट्रेन में घुसना चाहता है, परंतु ट्रेन में बैठे यात्री उसके घुसने का विरोध करते हैं। इसी बीच डिब्बे में यात्रा कर रहा पठान उनका सामान बाहर फेंक देता है। ठीक ऐसा ही व्यवहार दुबला-पतला बाबू एक बूढ़े मुसलमान दंपत्ति से करता है, जब वे भारत की सीमा में किसी स्टेशन से ट्रेन में चढ़ने की कोशिश करते हैं। ट्रेन के दरवाजे का हैंडल पकड़ पायदान पर लटक चुके बूढ़े मुसलमान के सिर पर वह हिंदू बाबू लोहे की छड़ से प्रहार करता है जो वह उन पठानों को मारने के लिए लाया था। परिणामत: वह डिब्बे से नीचे गिर जाता है और उसका सफ़र वहीं समाप्त हो जाता है। अपने संदेश में यह कहानी बड़ी स्पष्टता से यह जाहिर कर देती है कि हिंदू या मुसलमान दोनों में से कोई भी न तो सहिष्णु, उदार, करूणामय है और न ही क्रूर, कट्टर और निर्मम। स्थितियों के बदलते ही दोनों की फितरत बदल जाती है।

भीष्म साहनी ने न सिर्फ आज़ादी के समय की भीषण सांप्रदायिकता को ही प्रत्यक्ष देखा व भोगा, बल्कि आज़ादी के बाद भारत में हुए उन तमाम सांप्रदायिक हिंसा के भी प्रत्यक्षदर्शी बने, जिनमें १९८४ का हिंदू-सिख दंगा भी था। तत्कालीन भारतीय प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी की उनके सिख अंगरक्षक के द्वारा की गई हत्या के बाद हुए सिखों के क़त्ल-ए-आम को भी भीष्म साहनी ने बड़े नज़दिक से देखा व समझा। एक प्रधानमंत्री की हत्या की प्रतिक्रिया स्वरुप उत्पन्न हुए सांप्रदायिक तनाव, हिंसा व लूटमार का सशक्त और संवेदनशील चित्रण भीष्म जी ने 'झुटपुटा' कहानी में किया है। कहानी इंदिरा गांधी की हत्या के बाद दिल्ली में फैलते तनाव, सांप्रदायिक हिंसा की आहट की सूचना से आरंभ होती है। प्रोफेसर कन्हैयालाल दूध के इंतज़ार में बस्ती के अन्य लोगों के साथ खड़े हैं। दूध की गाडियाँ चलाने वाले सरदारों ने अपनी जान के भय से गाडियां चलाने से फिलहाल मना कर दिया है। दूध की लाइन में खड़े प्रोफ़ेसर के मस्तिष्क में बीते दिनों की घटनाएं कुलबुला रही हैं। लठैतों का समूह सडक़ पर मस्ती से झूमता, सिखों के घरों में आग लगा रहा है, दुकानों को लूटकर आग के हवाले कर रहा है। सामान्य लोग, यहां तक कि महिलाएं भी दुकानों की टूटी शटर के उस पार जा, अपनी पसंद का सामान चुनकर निकल रही हैं। सांप्रदायिक तनाव के माहौल में अफवाहों की बड़ी उत्तेजक भूमिका होती है। 'झुटपुटा'में भी लोगों के बीच तमाम तरह की अफवाहें फैल रही हैं। अफवाहें फैलाने वाले लोग कहीं बाहर से नहीं आए हैं। इस कहानी में लेखक ने हिंदू-सिख दंगे की विभीषिका व सामाजिक स्थिति का सूक्ष्म विश्लेषण प्रस्तुत किया है। सांप्रदायिक दंगे और मार-काट के माहौल में भी इंसानियत की जीवंत मिसालें इस कहानी के महत्त्व को और बढ़ा देती है। दूध की लाइन में लगी लडक़ी सरदार अंकल के लिए दूध की डोलची लेकर खड़ी है। लंबे इंतज़ार के बाद दूध की गाड़ी आती है तो सरदार ड्राइवर को देखकर लोग चकित रह जाते हैं। ऐसे माहौल में जब सरदारों को चुन-चुनकर मौत के घाट उतारा जा रहा हो, एक सरदार ड्राइवर का दूध की गाड़ी लेकर आने का जोखिम उठाना इंसानियत का एक बड़ा उदाहरण तब बन जाता है, जब वह मुस्कुरा कर कहता है, "बाबा, बच्चों ने दूध तो पीना है ना ! मैंने कहा, चल मना, देखा जाएगा, जो होगा। दूध तो पहुँचा आए।"3

भीष्म साहनी ने एक धर्म निरपेक्ष दृष्टि रखते हुए अपनी लेखनी से सदैव सांप्रदायिकता व सांप्रदायिक शक्तियों का विरोध व उनसे संघर्ष किया है, उनका यही संघर्ष उन्हें आज धार्मिक असहिष्णुता व सांप्रदायिक तनाव के समय में और अधिक प्रसांगिक बनाता है। भीष्म जी की कहानियां मात्र कथा नहीं, अपितु एक सीख है जो कठिन समय में भी मनुष्यता के बचे रहने का आश्वासन देती हैं। भीष्म जी की भाषा जनता की भाषा है। जिसके माध्यम से वे समाज की सच्ची और साफ तस्वीर पेश करते हैं। उनमें अनुभूति की सहजता और सरलता दोनों देखने को मिलती है। समाज और साहित्य के लिए भीष्म साहनी का कृतित्व हमारे लिए अत्यंत सार्थक और मूल्यवान है।

संदर्भ :-

1. पटरियां, भीष्म साहनी, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, चौथा संस्करण, पृ.सं.30

2. शोभायात्रा, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, चौथा संस्करण,पृ.सं.17

3. पाली, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, चौथा संस्करण, पृ.सं.58

भारतीय परंपरा में योग

विशेष

योग-साधना एक पूर्ण जीवन-पद्धति है, जिसका ठोस वैज्ञानिक आधार है। यह मात्र स्वयंप्रकाश ज्ञान (Intuition) पर आधृत नहीं है। यही कारण है कि आज के वैज्ञानिक एवं तकनीकी युग में भी इसका महत्व विद्यमान है और यों कहें कि उत्तरोत्तर इसका महत्व बढ़ता ही जा रहा है।

डॉ. संजय कुमार तिवारी
सहायक प्रोफेसर,
दूर शिक्षा निदेशालय,
महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा (महाराष्ट्र)

प्रस्तुत आलेख में भारतीय परंपरा में अतीत वर्तमान एवं भविष्य के संदर्भ में योग का अवलोकन करने का प्रयास किया गया है। चूँकि भारतीय संस्कृति की प्राचीनता के प्रामाणिक साक्ष्य के रूप में उपलब्ध वेदों में योग अपने मूल स्वरूप में अवस्थित है। इसके साथ ही उपनिषदों, स्मृतियों, महाभारत, गीता, पुराणों, विभिन्न तंत्र ग्रंथों, योग वासिष्ठ, भारतीय षड दर्शनों तथा जैन और बौद्ध दर्शनों में योग का प्रतिपादन उसके महत्व को दर्शाता है। योग रोगियों, भोगियों तथा योगियों सहित संपूर्ण मानवता के लिए समान रूप से उपादेय है। मूलतः योग का लक्ष्य आत्म-साक्षात्कार करना और समस्त भौतिक ऐषणाओं से मुक्त होना है, जिसकी अंतिम परिणति ईश्वर साक्षात्कार में होती है।

वैदिक कालीन मनीषियों एवं अध्येताओं को इस बात का स्पष्ट ज्ञान था कि हमारे समस्त दुःखों का मूल कारण अनियंत्रित चित् एवं विषयासक्ति है और यदि हमें दैहिक, भौतिक और दैविक दुःखों से छुटकारा पाना है, तो चित् पर नियंत्रण करना तथा विषयों के प्रति अनासक्त होना पड़ेगा और इस हेतु हमें योग-साधना का अनुपालन करना होगा। यद्यपि की संसारी व्यक्ति कर्म-मुक्त नही हो सकता, किंतु कर्म करते हुए अपनी चित्तवृत्तियों को नियंत्रित करके तथा कर्मफल के प्रति आसक्ति का परित्याग कर ले तो त्रिविध दुःखों से छुटकारा पा सकता है। इसके लिए दीर्घकालीन योगाभ्यास एवं वैराग्य अतिआवश्यक है; किंतु यह कार्य अत्यंत ही जटिल है, जिसे बिना कुशलता के प्राप्त नहीं किया जा सकता या यह कहे कि ऐसा करना बहुत बड़ा कौशल है। इन्हीं बातों को योग के बड़े प्रतिपादकों महार्षि पतंजलि तथा योगेश्वर कृष्ण ने कुछ इस प्रकार व्यक्त किया है- 'योगश्चितवृत्ति निरोधः' तथा 'योगः कर्मसु कौशलम'। अतः उक्त के आलोक में यहाँ योग के विविध पक्षों पर विमर्श प्रस्तुत किया जा रहा है।

महर्षि पतंजलि के अनुसार - 'चित्त की वृत्तियों का निरोध ही योग है'। चित्त की पाँच वृत्तियाँ- प्रमाण, विपर्यय, विकल्प, निद्रा एवं स्मृति हैं। यथार्थ का बोध ही प्रमाण है और प्रमाण भी तीन प्रकार का होता है प्रत्यक्ष प्रमाण, अनुमान प्रमाण, और आगम अथवा शब्द प्रमाण। विषय के यथार्थ स्वरूप को प्रकाशित न करने वाला ज्ञान विपर्यय है। केवल शब्द से उत्पन्न ज्ञान विकल्प है। अभाव की प्रतीति का अवलंबन करने वाली वृत्ति निद्रा है। अनुभूत विषय का उसी रूप में ज्ञान होना स्मृति है।

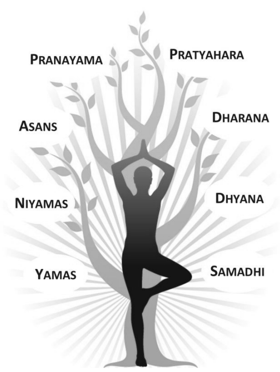

इन वृत्तियों के निरोध से तात्पर्य द्रष्टा का अपने स्वरूप में स्थित होना है। इसलिए वृत्तियों का निरोध आत्मसाक्षात्कार के लिए आवश्यक है। इसके लिए पतंजलि ने यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि आदि अष्टांग योग का विधान/प्रतिपादन किया है।

यम के पाँच भेद हैं- अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह। नियम भी पाँच प्रकार के होते है, यथा- शौच, संतोष, तप, स्वाध्याय एवं ईश्वर प्राणिधान। आसन से तात्पर्य शरीर की उन मुद्राओं अथवा भंगिमाओं से है, जिनमें सुखपूर्वक स्थिर रहकर योग-साधक ध्यानस्थ होते हैं। हठयोग में आसनों को बहुत महत्व दिया गया है, इनके सैकड़ों भेद वहां मान्य है। आसनों के स्थिर होने पर श्वास-प्रश्वास की गति को नियंत्रित करना ही प्राणायाम है। बाह्य विषयों से विरक्त अथवा अनासक्त होकर चित्त का समाहित होना ही प्रत्याहार है। देश-विशेष मे चित्त को स्थिर करना ही धारणा है। स्थिर चित्त का एक-सा बना रहना ही ध्यान है। समाधि ध्यान की वह अवस्था है, जिसमें ध्याता और ध्यान अपने स्वरूप से शून्य हो जाते हैं, केवल ध्येय की सत्ता रह जाती है। इस अवस्था में 'आत्म' और 'पर' का भेद मिट जाता है।

एक प्रकार से ध्यानावस्था की पूर्णता ही समाधि है। समाधि-दशा में योगी को आत्मसाक्षात्कार होता है। वह परमात्मा से पूर्ण अद्वैत स्थापित कर लेता है। यही योग साधना का अंतिम लक्ष्य है। योग-साधना के क्रम में योग के बहिरंग साधनों के निरंतर अभ्यास एवं अनुपालन से साधक व्यक्ति का शरीर समस्त भौतिक एवं मानसिक-व्याधियों से मुक्त हो जाता है, जो योग साधना का आनुषंगिक लाभ है, किंतु लक्ष्य नहीं। पुनश्च योग के अंतरंग साधनों अथवा उच्चत्तर सापानों के अनुपालन एवं अभ्यास से विभिन्न प्रकार की यौगिक सिद्धियाँ प्राप्त हो जाती है, किंतु सिद्धियों का प्रदर्शन योग का लक्ष्य नहीं है। यह सिद्धियाँ तो दिव्य शक्ति के अधूरे साक्षात्कार का प्रमाण है। यह साधक को लुभाकर उसे लक्ष्य से भटका सकती है। इसीलिए सच्चा योग का अनुगामी परमात्मा से पूर्ण अद्वैतता स्थापित करके ही साधना-पथ से विरत होता है।

महर्षि पतंजलि के योग मत को राज योग अथवा अष्टांग योग कहते हैं। उनके बाद योग के अन्यतम साधक गुरू गोरखनाथ ने हठ योग का प्रवर्तन किया। इसमें महर्षि पतंजलि द्वारा प्रतिपादित योग के आठ अंगों में से प्रथम दो यम एवं नियम को विशेष महत्व न देकर छह अंगों को विशेष महत्व दिया जाता है, इसीलिए हठ योग को षडंग योग भी कहते है। हठयोग में 'प्राणसाधना' को अत्याधिक महत्व प्रदान किया गया है। हठयोग की मान्यता है कि प्राण को संयमित करने से 'मन' स्वतः संयमित हो जाता है। मानव शरीर में 72,000 नाडियां है, इनमें से दस नाडियां प्रमुख है। इन दस में से भी इड़ा, पिंगला और सुषुम्ना अत्यंत महत्वपूर्ण है। नासिका के दायीं ओर इड़ा तथा बायी ओर पिंगला की स्थिति है और इन दोनों के बीच में 'सुषुम्ना' है। नाड़ियों में वायु निरंतर संचारित होता रहता है, वायुओं में 'प्राण', 'अपान', 'समान', 'ब्यान' एवं 'उदान' प्रमुख है। प्राण और अपान वायु इड़ा और पिगंला नासारंध्रों से होकर निरंतर ऊपर-नीचे चढ़ते-उतरते रहते हैं। इसी कारण मनुष्य का चित्त अस्थिर रहता है। प्राणायाम के द्वारा योग साधक प्राण एवं अपान के संचरण को अवरूद्ध कर उन्हें संयुक्त कर देता है; तत्पश्चात् उन्हें वह सुषुम्ना में प्रविष्ट कराता है और सुषुम्ना मार्ग से ऊपर ले जाकर ब्रह्मरंध्र में लय कर देता है। इससे उसे उन्मनी अवस्था की प्राप्ति होती है। इड़ा और पिंगला को सूर्य और चंद्र का प्रतीक माना जाता है। यही स्थिति प्राण और अपान की है। इस प्रकार प्राण और अपान तथा इड़ा और पिंगला का मिलन सूर्य और चंद्र का मिलन है। सूर्य का बोधक 'ह' और चंद्र का वोधक 'ठ' है। अतः प्राण और अपान का मिलन सूर्य और चंद्र या 'ह' और 'ठ' का मिलन है। 'ह' और 'ठ' के मिलन के कारण इसे 'हठ योग' कहते है। पुनः प्राण और अपान के मिलन को'रज'और 'वीर्य','शक्ति' और 'शिव' तथा जीवात्मा और परमात्मा का मिलन भी समझा जाता है।

हठ योग की साधना में कुंडलिनी जागरण का विशेष महत्व है। हठ योग के अनुसार व्यष्टि पिंड अर्थात मानव शरीर और समष्ट पिंड अर्थात ब्रह्मांड दोनों तत्वतः एक है। ब्रह्मांड में शक्ति और शिव संश्लिष्ट रूप में व्याप्त है। मानव-पिंड में भी दोनों की सत्ता है। मानव-पिंड में शिव की निजा शक्ति कुंडलिनी रूप में मूलाधार चक्र में सुप्त रहती है और उध्र्व मस्तक में शिव का निवास है। सुप्त कुंडलिनी को जागृत करके उसे शिव से मिलाना ही योग के साधक का लक्ष्य है।

पुनः भगवद्गीता में योगेश्वर कृष्ण ने योग को एक नया आयाम देते हुए अर्जुन को समझाते है कि 'हे अर्जुन! आसक्ति को त्यागकर सिद्धि और असिद्धि में समान बुद्धिवाला अर्थात योगस्थ होकर कर्मों को करो, क्योंकि समत्वभाव ही योग है।

योगस्थः कुरू कर्माणि संग त्यक्त्वा धनंजय।
सिद्ध्यसिद्धयोंः समोभूत्वा समत्वं योग उच्यते।।

वे पुनः कहते हैं कि जो समत्व बुद्धि प्राप्त कर लेते हैं, वे पाप-पुण्य से मुक्त हो जाते हैं, इसलिए तुम समत्व बुद्धियोग के लिए ही चेष्टा करो, क्योंकि कर्म की कुशलता ही योग है।

बुद्धि युक्तो जहातीह उभे सुकृत दुष्कृते।
तस्माद् योगाय युज्यस्व योगः कर्मसु कौशलम।।

अतः गीता के अनुसार आसक्ति से रहित होकर सिद्धि व असिद्धि में समभाव रखते हुए युक्तिपूर्वक कर्म करना ही योग है।
भारतीय दर्शन एवं संस्कृति की दो अन्य महत्वपूर्ण धाराएं जैन और बौद्ध धर्मों में भी योग को अत्यधिक महत्व दिया गया है। जैन धर्म के प्रतिपादक महावीर स्वामी ने योग साधना के द्वारा ही परमत्तव का साक्षात्कार किया था। जैन मत में भी मोक्ष की सिद्धि के लिए नए कर्मों का निरोध अर्थात संवर आर पूर्व के कर्मफलों का क्षय अर्थात निर्जरा आवश्यक माना गया है और इसके लिए ध्यान अनिवार्य माना गया है। आर्त ध्यान, रौद्र ध्यान, धर्म ध्यान तथा शुक्ल ध्यान आदि को परम समाधि एवं आत्म साक्षात्कार की प्राप्ति का साधन माना गया है।

जैन की तरह बौद्ध धर्म में भी योग का महत्व स्वीकृत है। यह सर्वविदित है कि महात्मा बुद्ध ने ध्यानस्थ होकर ही बुद्धत्व की प्राप्ति की थी तथा बुद्धत्व

के उपरांत ही चार आर्य सत्यों- दुःख, दुःख समुदय, दुःख निरोध तथा दुःख निरोध गामिनी प्रतिपदा, का उपदेश दिया। पुनः दुःखों की आत्यंतिक निवृति हेतु उन्होंने अष्टांगिक मार्ग-सम्यक दृष्टि, सम्यक संकल्प, सम्यक वाक, सम्यक कर्मांत, सम्यक आजीव, सम्यक व्यायाम, सम्यक स्मृति और सम्यक समाधि का उपदेश दिया। बुद्ध की दृष्टि में यही सम्यक समाधि ही निर्वाण प्राप्ति का साधन है। बुद्ध ने निर्वाण के लिए समाधि तथा समाधि के लिए शील का उपदेश देकर प्रकारांतर से योग-साधना के विधान को ही महत्व दिया है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि योग-साधना एक पूर्ण जीवन-पद्धति है, जिसका ठोस वैज्ञानिक आधार है। यह मात्र स्वयंप्रकाश ज्ञान (Intuition) पर आधृत नहीं है। यही कारण है कि आज के वैज्ञानिक एवं तकनीकी युग में भी इसका महत्व विद्यमान है और यों कहें कि उत्तरोत्तर इसका महत्व बढ़ता ही जा रहा है। वैश्विक धरातल पर इसके प्रति आकर्षण बढ़ा है और आज के उथल-पुथल भरें व्यावसायिक युग में मानसिक तनाव को दूर करने के लिए योग से बड़ा कोई साधन नहीं है। परिणामतः संपूर्ण विश्व में जगह-जगह योग के केंद्र खोले जा रहे हैं। इसमें कोई अतिशयोक्ति नहीं है कि आज का युग यदि योग-दृष्टि संपन्न हो जाएं तो विश्व विविधआयामी समस्याओं से मुक्त हो सकता है एवं साथ ही निकट भविष्य में यदि योग का विज्ञान और तकनीक के साथ समन्वय हो सका तो योग का एक नया आयाम प्रकट होगा।

संदर्भ:

1. भारतीय दर्शन -डॉ. एस. राधाकृष्णन
2. भारतीय दर्शन -डॉ. एस. एन. दासगुप्ता
3. भारतीय संस्कृति और साधना -पं. गोपीनाथ कविराज
4. योग के विविध आयाम -डॉ. राम चंद्र तिवारी
5. भगवद्गीता
6. हठ योग प्रदीपिका
7. पातंजलि योग सूत्र
8. सिद्ध सिद्धांत संग्रह
9. गोरखबानी

जनपद भिण्ड (म0प्र0) में मृदा का क्षेत्रीय वितरण : भौगोलिक अध्ययन

शोध

डॉ0 पुष्पहास पाण्डेय

पी–एच.डी.–नेट

सहायक प्राध्यापक, (भूगोल)

अनुदानित महाविद्यालय सम्बद्ध छ0 शा0 म0 विश्वविद्यालय–कानपुर

&

शिवम् वर्मा

नेट–जे.आर.एफ.

शोध छात्र, (भूगोल)–जीवाजी विश्वविद्यालय, ग्वालियर

शोध – सार

मृदा प्रकृति प्रदत्त बहुमूल्य संसाधन है, जिस पर मानवीय विकास की आधार – शिला स्थापित है। मृदा, मानव को मूलतः अपक्षय प्रक्रिया के प्रतिफल के रूप में प्राप्त होती है। मृदा गुण, रंग, उर्वरता इत्यादि के आधार पर भिन्न – भिन्न प्रकार की होती है। मानव की समस्त प्राथमिक आवश्यकतायें प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से मृदा की सहायता से पूर्ण होती है। साथ ही साथ मृदा, मानव की विविध आर्थिक क्रिया – कलापों में सहायक है। मृदा के क्षेत्रीय वितरण प्रतिरूप का निःसंदेह विविध मानवीय क्रिया–कलापों पर बहुपक्षीय प्रभाव होते हैं। अध्ययन क्षेत्र जनपद भिण्ड (म0प्र0) भी मृदा के सन्दर्भ में विभिन्नताओं को आत्मसात किये हुये है। प्रत्येक प्रकार की मृदा अपनी कुछ विशेष विशिष्टताओं हेतु जानी जाती है। जनपद भिण्ड (म0प्र0) में उपस्थित मृदाओं के समुचित प्रबन्धन की नितान्त आवश्यकता है, क्योंकि अध्ययन क्षेत्र मुख्यतः विभिन्न मृदा सम्बन्धी समस्याओं से ग्रस्त है, जिन्हे दूर कर अध्ययन क्षेत्र के विकास का मार्ग प्रशस्त हो सकता है।

विशिष्ट शब्द : मृदा, संसाधन, मानवीय विकास, क्षमता, वनस्पति, जीवावशेष

प्रस्तावना –

किसी क्षेत्र का प्राकृतिक धरातल विविध प्रकार की वनस्पति, जीवावशेष, मौलिक चट्टान एवं कालान्तराल उस क्षेत्र की मृदा निर्धारण के मौलिक आधार होते हैं। मृदा निर्माण में जलवायु तथा स्थानीय शैल के रासायनिक तत्वों में विभिन्नता के परिणामस्वरूप, मृदा में उत्पादक कणों की संरचना तथा जलग्रहण क्षमता में विविधता पायी जाती है। मृदा जीवन हेतु सहायक संसाधनों में महत्वपूर्ण है, अतः इसकी उपलब्धता, क्षमता, उपयोगिता इत्यादि का ज्ञान आवश्यक है।

अध्ययन क्षेत्र :

जनपद भिण्ड (म0प्र0), 25° 55′ उत्तरी अक्षांश से 26° 48′ उत्तरी अक्षांश एवं 78° 12 पूर्वी देशान्तर से 79° 05′ पूर्वी देशान्तर के मध्य स्थित है। मध्य प्रदेश राज्य के चम्बल सम्भाग के अन्तर्गत स्थित है। अध्ययन क्षेत्र का भौगोलिक क्षेत्रफल 4459 वर्ग किलोमीटर है। जनपद भिण्ड (म0प्र0) में 6 विकासखण्ड क्रमशः अटेर, भिण्ड, मेहगाँव, गोहद, रौन एवं लहार है।

अध्ययन क्षेत्र में औसत वार्षिक वर्षा 759.2 मि0मी0 है, जबकि औसत तापमान 30° सेण्टीग्रेड से 36° सेण्टीग्रेड के मध्य रहता है। अध्ययन क्षेत्र का एक विशाल

भूभाग अवनालिका अपरदन से प्रभावित है और परिणामतः बीहड़ और अध्ययन क्षेत्र जनपद भिण्ड (म0प्र0) एक दूसरे के पर्याय बन चुके हैं। अध्ययन क्षेत्र को विकसित अवस्था तक पहुँचाने के लिये मृदा संसाधन का समुचित ज्ञान व उपयोग एवं संरक्षण आवश्यक है।

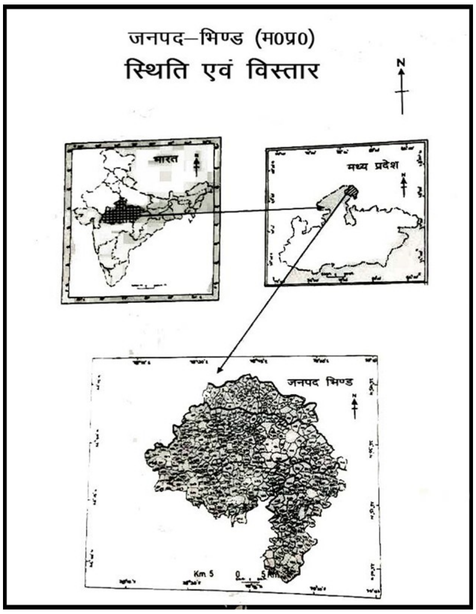

चित्र –(1.1)

परिकल्पना निर्माण :

- मृदा एक अमूल्य प्राकृतिक संसाधन है।
- मृदा असमानता के साथ उपलब्ध होती है।
- विविध मृदाओं की उपयोगिता भिन्न – भिन्न है।
- विभिन्न क्रियाओं के समुचित परिणाम हेतु सम्बन्धित मृदा की उपलब्धता का ज्ञान आवश्यक है।

उद्देश्य :

- अध्ययन क्षेत्र में उपस्थित मृदाओं को ज्ञात करना।
- जनपद भिण्ड (म0प्र0) के मृदा वितरण को समझना।
- अध्ययन क्षेत्र की मृदाओं की विशिष्टताओं को जानना इत्यादि

विधितन्त्र :

अध्ययन के निष्पादन हेतु प्राथमिक एवं द्वितीयक आँकड़ों को एकत्रित किया जायेगा। आँकड़ों का विश्लेषण, सारणीकरण एवं प्रस्तुतिकरण सम्पन्न किया जायेगा। आँकड़ों की सहायता से यथासम्भव मानचित्रो, तालिका आदि को भी अध्ययन में सम्मिलित किया जायेगा।

भिण्ड जनपद की मिट्टियों का जलोढ़ मृदा वर्ग के अन्तर्गत सम्मिलित किया गया है, जो वस्तुतः नदियों के निक्षेपजन्य जलोढ़क की ऊपरी सतह पर विकसित हुयी है, इस जलोढ़ मृदा का रंग हल्के भूरे रंग के साथ धुन्धला बादामी तथा पीला है। मैटे तौर पर जनपद की मिट्टियों को दो प्रमुख वर्गो में विभक्त कर सकते हैं–

1. पुरातन कांप
2. नूतन कांप

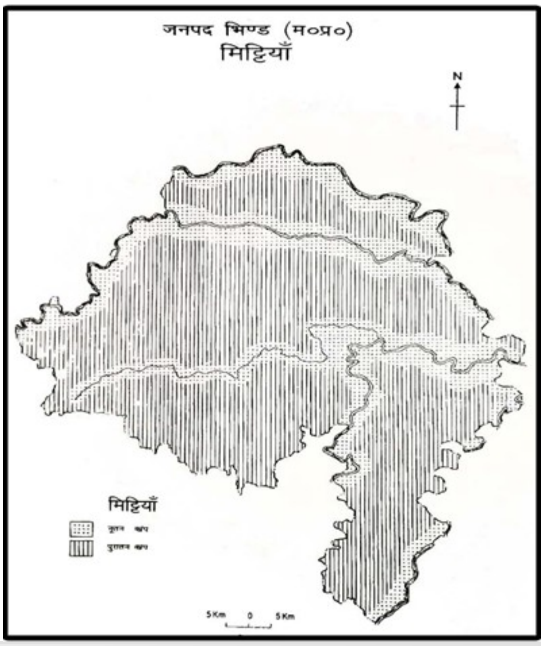

जनपद के जिस भूभाग में, सतत् नदियों द्वारा प्रतिवर्ष नवीन मृदा का निक्षेपण हो रहा है। इन क्षेत्रों की मिट्टी को नूतन कांप कहा जाता है। इसके विपरीत जिन क्षेत्रों में नदियों द्वारा लाई गयी, मिटटी की निक्षेपण प्रक्रिया प्रायः समाप्त प्राय है, उस मिटटी को पुरातन कांप की संज्ञा दी गई है। मानचित्र क्रमांक 1.2 में जनपद भिण्ड के पुरातन एवं नूतन कांप मिटटी के क्षेत्रों को प्रदर्शित किया गया है। इसके अतिरिक्त मृदा गठन, संरचना, निर्माण प्रक्रिया में अन्तर तथा स्थानीय विविधताओं के आधार पर अध्ययन क्षेत्र की मिटियों को अधोलिखित मिटटी प्रकारों में बांटा गया है–

चित्र –(1.2)

1. चीका प्रधान चिकनी मिट्टी।
2. लवण प्रधान क्षारीय मिट्टी।
3. बलुई दोमट मिट्टी।
4. बालूयुक्त चिकनी दोमट मिट्टी।
5. बीहड़ मिट्टी।

चीका प्रधान चिकनी मिट्टी–

इस प्रकार की मिटटी का विस्तार प्रधान रूप से अध्ययन क्षेत्र के दक्षिणी एवं दक्षिणी–पश्चिमी वृहद भू–भाग में देखने को मिलता है। अध्ययन क्षेत्र में, इस मिट्टी का विस्तार 110701.22 हेक्टेयर भूमि पर है। इस मिट्टी को अध्ययन क्षेत्र मटियार, चिकनी एवं चीका प्रधान चिकनी मिट्टी के नाम से अभिहित किया जाता है। इसका निर्माण धरातल के उच्च क्षेत्रों से प्राप्त होने वाले अवसाद पर निर्भर करता है। इस प्रकार की मिट्टी का विस्तार अध्ययन क्षेत्र के उन भागों में देखने को मिलता है, जहाँ वर्षा का जल भर जाता है। इस मिट्टी में मृत्तिका की मात्रा 40 प्रतिशत से कम तथा क्षारीयपन का कोई भी लक्षण, इस मिट्टी को देखने को मिलता है। उस मिट्टी में पारगम्यता मध्यम से मध्यम–निम्न होती है। इस मिट्टी में चूने की प्रधानता तथा घुलनशील लवणों का संग्रह अधिक होता है। अध्ययन में वैशाली नदी के दक्षिणी भू–भाग में इस मिट्टी का विस्तार देखने को मिलता है। अध्ययन क्षेत्र के इस मिट्टी के भू भाग में गेहूँ, चना, तिलहन व चावल की कृषि की जाती है। विभिन्न संस्तरों में इस मिट्टी के रंग में परिवर्तन देखने को मिलता है। इसका रंग धूसर भूरा से गहरा भूरा है। इस मृदा का पी0एच0 मान 7.4 से 7.7 तथा पारगम्यता मध्यम तथा जलधारण क्षमता भी मध्यम है। अध्ययन क्षेत्र के गोहद तथा मेंहगाँव तहसील में है, इस मिट्टी का विस्तार है।

बालूयुक्त चिकनी दोमट मिट्टी–

यह मिट्टी बलुई एवं बलुई दोमट मिट्टी का सम्मिश्रण होती है। इस मिट्टी में चीका मिट्टी का अनुपात बलुई कणों की तुलना में कम है। इस मिट्टी का विस्तार अध्ययन क्षेत्र में मध्य मैदानी क्षेत्र में पूर्व से पश्चिमी एक बड़े भू–भाग में देखने को मिलता है। इस मिट्टी में बलुई कणों के अनुपात में एक स्थान से दूसरे स्थान पर विभिन्नता देखने को मिलती है। हल्के लाल आभायुक्त रंग वाली यह मिट्टी मध्यम उपजाऊ है। यत्र–तत्र, इस मिट्टी में चीका मिट्टी के संस्तर भी देखने को मिलते हैं। गठन की दृष्टि से इस श्रेणी की मिट्टी की परिच्छेदिका के सभी संस्तरों में बलुई दोमट की प्रधानता है। इस मिट्टी में पारगम्यता अत्यधिक है तथा क्षारीयता अति निम्न है। घुलनशील लवणों की मात्रा तथा विनिमय योग में सोडियम की मात्रा दिखती है। मृदा अपरदन की मात्रा न्यून से मध्यम है। इस मिट्टी में जल निकास व जल ग्रहण क्षमता सामान्य है। अध्ययन क्षेत्र में इस मिट्टी में गेहूँ, ज्वार, बाजरा, तिलहन आदि फसलों की कृषि की जाती है तथा अध्ययन क्षेत्र के लगभग 106408.54 हेक्टेयर क्षेत्र पर है, इस मिट्टी का विस्तार है।

लवण प्रधान क्षारीय मिट्टी–

यह मिट्टी बजरी युक्त दोमट मिट्टी है जिसमें मृतिका अंश बहुत कम होता है। इस मिट्टी में लौह युक्त लाल रंग के कणों का सम्मिश्रण मिलता है। लैटराइजेशन के कारण रंग भूरे से गहरा भूरा होता है। इस मिट्टी का विस्तार लहार के पठारी भू–भाग की उच्च भूमि पर मिलता है। अध्ययन क्षेत्र के मैदानी भागों में छोटे–छोटे भू–भागों पर भी इस मिट्टी का विस्तार देखने को मिलता है। इस मिट्टी का पी0एच0 मान 6 से 6 .8 के बीच होने कारण हल्की अम्लीय होती है। इस प्रकार की मिट्टी में नाइट्रोजन अंश की मात्रा बहुत कम पायी जाती है। इस प्रकार की मिट्टी का विस्तार अध्ययन क्षेत्र के लहार, रौन तथा गोहद तहसीलों के अल्प भाग में यह मिट्टी देखने को मिलता है। यह मिट्टी अधिक उपजाऊ नहीं होती है। ज्वार, बाजरा, कौदों, तिल तथा रबी में गेहूँ, तिलहन, दालों की कृषि की जाती है। अध्ययन क्षेत्र के लगभग 103442.68 हेक्टेयर क्षेत्र पर इस मिट्टी का विस्तार है।

बलुई दोमट मिट्टी–

इस प्रकार की मिट्टी का निर्माण नदियों द्वारा निक्षेपित काँप मिट्टी के क्षेत्र में होता है। इस मिट्टी का विस्तार चम्बल, क्वारी तथा पहूज नदियों के समीपवर्ती भू–भागों में एक संकीर्ण पट्टी के रूप में दे खने को मिलता है। नदियाँ बाढ़ के समय कांप मिट्टी बहाकर लाती हैं तथा बाद में कांप मिट्टी को निक्षेपित कर देती हैं। यह मिट्टी बलुई से बलुई दोमट है। अध्ययन क्षेत्र के एक लघु भू–भाग पर कीचड़ युक्त बलुई दोमट मिट्टी भी देखने को मिलती है। यह मिट्टी नदी के किनारों से दूर बीहड़ भू–भाग में पायी जाती है। यह मिट्टी उपजाऊ तो होती है, किन्तु भू–क्षरण के कारण आर्द्रता के अभाव में कृषि के लिए अनुपयुक्त होती है। इस मिट्टी क्षेत्र में खरीफ में बाजरा व दालें तथा रबी में जौ, चना की कृषि की जाती है। जल स्तर अति उच्च है तथा मिट्टी के कणों का व्यास 0.5 से लेकर 0.25 तक होता है। इस मिट्टी का पी0एच0 मान भी 6.0 से 6.8 तक होता है तथा लवणता न्यून होती है। अध्ययन क्षेत्र में इस मिट्टी का विस्तार 67696 हेक्टेयर पर देखने को मिलता है। विन्यास की दृष्टि से इस मिट्टी का पार्श्व दृश्य सभी संस्तरों में बलुई दोमट होता है तथा सभी संस्तरों में चूना की प्रधानता देखने को मिलती है।

बीहड़ मिट्टी–

अध्ययन क्षेत्र में क्वारी चम्बल व सिंध नदियों के बीहडी भू–भाग में कंकड़ मिश्रित बलुई मिट्टी का विस्तार देखने को मिलता है। इस कंकड़ मिश्रित बलुई मिट्टी को स्थानीय स्तर पर बीहड़ी मिट्टी कहते हैं। इस मिट्टी में कंकड़ों की अधिकता है। अत्यधिक भू–क्षरण के कारण आमतौर पर, यह मिट्टी अन उपजाऊ है। नदियों में गिरने वाले नालों व जल धाराओं ने इस मिट्टी की उपजाऊ क्षमता कम कर दी है। वार्षिक वर्षा ने भूमि समतल स्वरूप एवं समतल मिट्टी के उपजाऊपन को समाप्त कर विरूपित कर दिया है। इस मिट्टी में चना, जौ, बाजरा की कृषि प्रमुख है। अध्ययन क्षेत्र में इस मिट्टी का विस्तार 57651.56 हेक्टेयर क्षेत्र पर देखने को मिलता है। मानचित्र क्रमांक 1.3 में अध्ययन क्षेत्र जनपद भिण्ड (म.प्र.) में विभिन्न मृदा क्षेत्रों को प्रदर्शित किया गया है।

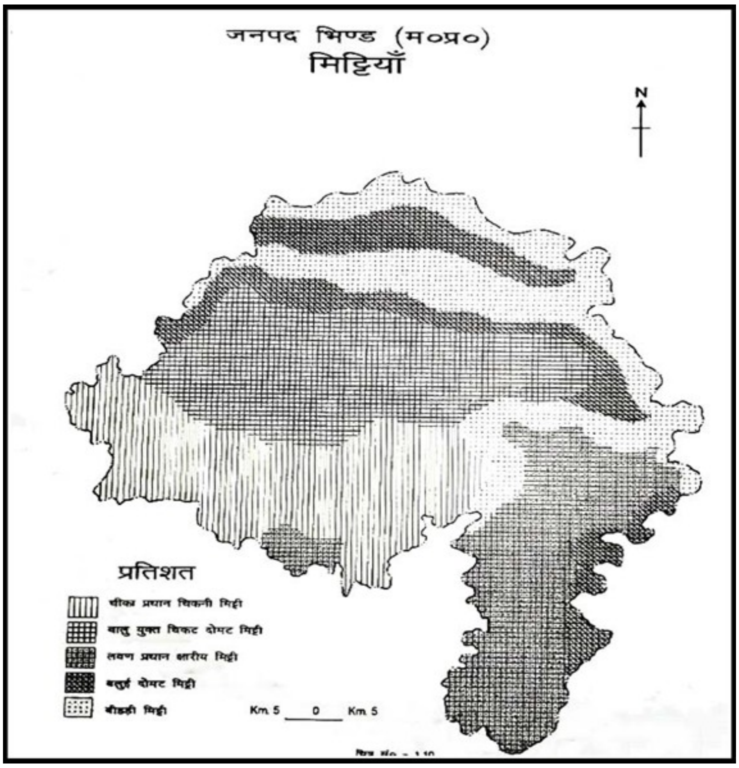

चित्र –(1.3)

अध्ययन क्षेत्र जनपद भिण्ड (म0प्र0) में उपस्थित मृदाओं के वितरण के अध्ययनोपरान्त, यह स्पष्ट है, कि अध्ययन क्षेत्र की मृदाओं के संरक्षण की अत्यधिक आवश्यकता है, ताकि न केवल इस अमूल्य संसाधन का संरक्षण सम्भव हो सके, बल्कि अनेकों – अनेक आर्थिक क्रियाओं को पूर्व की अपेक्षा बेहतर रूप में क्रियान्वयन कर, व्यक्ति विशेष के साथ ही साथ सम्पूर्ण अध्ययन क्षेत्र का विकास सम्भव हो सके।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. Araheri, H.R. and others (1962) : Soil Management in india
2. Bannett, H.H. (1939) : Soil Conservation
3. Banshal, P.C. (1977) : Agricultural problems of India, Vikas Publication – New Delhi
4. District Hand – Book of Bhind (M.P.)
5. कौशिक, एस0डी0 एवं अलका गौतम (2003) : संसाधन भूगोल

www.transframe.in

ISSN 2455-0310